

‘‘उच्च शिक्षा तथा निर्देश के माध्यम का विद्यार्थियों पर प्रभाव: बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन’’

(IMPACT OF MEDIUM OF INSTRUCTION ON THE STUDENTS AND HIGHER EDUCATION: A SOCIOLOGICAL STUDY OF BABASAHEB BHIMRAO AMBEDKAR UNIVERSITY, LUCKNOW)

**लघु शोध-प्रबन्ध
सार (Abstract)**



बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय से समाजशास्त्र विषय में एम०फिल० उपाधि हेतु प्रस्तुत

मास्टर ऑफ फिलॉसफी

शोधार्थी

अल्का गौतम

नामांकन सं०-569/17

शोध निर्देशक

प्रो० बीरेन्द्र नारायण दुबे

अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ

बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ

(केन्द्रीय विश्वविद्यालय)

विद्या विहार रायबरेली रोड, लखनऊ- 226 025

उत्तर प्रदेश, भारत

2020-22

अध्याय.1

परिचय

मानव आदिकाल से जो भी अनुभव के माध्यम से सीखता, समझता व ग्रहण करता आ रहा है, वह शिक्षा के द्वारा ही सीखता है। शिक्षा न केवल दक्षता बढ़ाने का साधन है अपितु व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन को उच्च बनाने का एक साधन भी हैं। आज का युग वैज्ञानिक युग है। यह भी शिक्षा की ही देन है। शिक्षा जीवन का संपूर्ण सार है। शिक्षा सामाजिक उद्देश्य की पूर्ति का एक साधन है जिससे समाज अपने को निर्मित व परिवर्तित भी करती हैं अर्थात् अस्तित्व को सुनिश्चित करती है। शिक्षा मानवीय गुणों का विकास करती हैं। शिक्षा व्यक्ति को केवल ज्ञान ही नहीं देती अपितु उसका निर्माण भी करती है। शिक्षा व्यक्ति के चरित्र, विचार, आचरण तथा व्यवहार में परिवर्तन लाने वाली एक प्रक्रिया है। अतः शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का एक साधन है। मनुष्य के अज्ञान को नष्ट कर उसे ज्ञान के प्रकाश की ओर ले जाने का कार्य भी शिक्षा ही करती हैं अर्थात् शिक्षा मानव जीवन की आधारशिला है। शिक्षा व्यक्ति के जीवन को तार्किक बनाती हैं। शिक्षा का संबंध केवल साक्षरता से ही नहीं है अपितु शिक्षा चेतना की भावना भी जागृत करती हैं। नवजात शिशु असहाय व असामाजिक होता है। शिक्षा ही एक शिशु का विकास करके उसे अपने जीवन में विभिन्न उत्तरदायित्वों को समुचित ढंग से करने के योग्य बनाती है। अतः शिक्षा व्यक्ति को जीवन सागर से जूझने के योग्य बनाती हैं। 'गांधी' के अनुसार--"एक अच्छी शिक्षा की कसौटी स्वावलंबन है अर्थात् शिक्षा स्वावलंबी होनी चाहिए।" उनका मानना था कि- मातृभाषा द्वारा ही उचित शिक्षा दी जा सकती है। विदेशी भाषा के माध्यम से हम मौलिक कार्यों के अयोग्य हो जाते हैं। जब तक मनुष्य मातृभाषा में प्रभावपूर्ण तरीके से लिखना, बोलना, पढ़ना नहीं सीखता है तब तक उसके विचारों में स्पष्टता नहीं आती है। मातृभाषा अपने भाव को व्यक्त करने का एक अच्छा साधन है। शिक्षा मानव को समाज के साथ जोड़ने में एक अहम भूमिका का निर्वहन करती हैं। इसके माध्यम से व्यक्ति के व्यक्तित्व को तराशा जाता है तथा ज्ञान को व्यवस्थित (Management of education) रूप से रखते हैं तथा संस्कृति का निर्माण करते हैं।

'जॉन डीवी'-- "शिक्षा व्यक्ति की उन समस्त शक्तियों का विकास है जिससे वह अपने वातावरण पर नियंत्रण रख सके और अपनी सभी संभावनाओं को पूर्ण कर सके।" 'दुर्खीम' ने पहली बार शिक्षा को एक विधा के रूप में देखा। उनका मानना था कि- "शिक्षा कैसी भी हो इसे नैतिकता पर जोर देना चाहिए।" दुर्खीम नैतिक शिक्षा पर बल देते हैं। समाजशास्त्री शिक्षा

को, समाज को स्थिर रखने तथा उन्नत करने का साधन समझते हैं। वे शिक्षा की व्यवस्था का सामाजिक संगठन, सामाजिक कार्यों एवम् सामाजिक आवश्यकताओं के आधार पर करते हैं। समाजशास्त्री व्यक्ति को दूसरे लोगों के आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक कार्यों में सफलतापूर्वक भाग लेने के लिए ही शिक्षा का प्रयोजन मानते हैं। प्रघटनाशास्त्रियों तथा अंतः क्रियावादियों का मानना है कि- "शिक्षा समाज को जोड़ती है। यह एक सेतु का काम करती हैं जो शिक्षा और संस्कृति को एक सूत्र में बांधती हैं।" इस प्रकार कहा जा सकता है की शिक्षा व्यक्ति के जीवन के लिए तथा समाज के लिए कितनी उपयोगी है। अतः शिक्षा मानव जीवन की आधारशिला है।

प्रस्तुत शोध में शिक्षा के उच्च स्तर की शिक्षा तथा निर्देश के माध्यम की बात की गयी है।

उच्च शिक्षा- उच्च शिक्षा का क्षेत्र विशेष योग्यता का होता है। उच्च शिक्षा का वास्तविक अर्थ- सामान्य रूप से सबको दी जाने वाली शिक्षा के ऊपर किसी विशेष, विषय या सूक्ष्म शिक्षा को उच्च शिक्षा कहते हैं। यह शिक्षा विशेषतः विश्वविद्यालयों, कम्प्युनिटी विश्वविद्यालयों, लिबरल आर्ट्स कॉलेजो एवं प्रौद्योगिकी संस्थानों आदि में दी जाती हैं। प्रारंभिक एवं माध्यमिक के बाद यह (उच्च शिक्षा) शिक्षा का तृतीय स्तर है। इसके अंतर्गत स्नातक, परास्नातक एवं व्यवसायिक (Commercial) एवं प्रशिक्षण (Training) आदि आते हैं तथा यह शैक्षिक संरचना तथा शैक्षिक पिरामिड की स्थितिनुसार उच्च शिक्षा का स्तर सबसे ऊंचा होता है। इसे विश्वविद्यालयी शिक्षा भी कहा जाता है। All India Higher Education Sarvey (October,2021) के अनुसार भारत में वर्तमान समय में 1013 विश्वविद्यालय है। भारत में उच्च शिक्षा प्रणाली के अंतर्गत सार्वजनिक और निजी दोनों प्रकार के विश्वविद्यालय सम्मिलित है। सार्वजनिक विश्वविद्यालयों को भारत के केंद्रीय सरकारों तथा राज्य सरकारों से सहायता मिलती है जबकि निजी विश्वविद्यालय निजी संस्थाओं एवम् सोसाइटी के द्वारा संचालित किये जाते हैं। जिनमें 43 केंद्रीय विश्वविद्यालय है जिनमें से 40 केंद्रीय विश्वविद्यालय मानव विकास मंत्रालय, कृषि मंत्रालय, जहाजरानी मंत्रालय, विदेश मंत्रालय के अंतर्गत एक-एक केंद्रीय विश्वविद्यालय आते हैं। भारत में विश्वविद्यालयों को मान्यता विश्वविद्यालय अनुदान आयोग देता है। 40,000 कॉलेज और 11,443 स्टैंड अलोन संस्थान है। 23 प्रौद्योगिकी संस्थान है। ये संस्थान भारत द्वारा स्थापित किये गये राष्ट्रीय महत्व के संस्थान हैं। डॉ. मनमोहन सिंह द्वारा 2012 में एक एम्स विश्वविद्यालय भारत के रायबरेली में खोला गया। सन् 2014 में मोदी सरकार ने 14 एम्स संस्थानों की भारत के अन्य भागो में निर्माण की नींव रखी ताकि दूर-दूर के लोगो को

बेहतर इलाज की सुविधाएँ प्राप्त हो। सन् 2022 तक हर राज्य में एक एम्स खोलने पर विचार किया।

उच्च शिक्षा जिसके द्वारा समाज व राष्ट्र के विभिन्न क्षेत्रों के लिए विशेषज्ञ तैयार किए जाते हैं। उच्च शिक्षा का उद्देश्य ऐसे विद्वानों का निर्माण करना है जो हमारी राष्ट्रीय सभ्यता, संस्कृतियों, रीति-रिवाजों व परंपराओं की रक्षा व पुनरुत्थान के उचित निर्देशन में सहायक हो। उच्च शिक्षा उच्च स्तर से मानव संसाधनों का निर्माण करती है। उच्च शिक्षा किसी राष्ट्र के बहुमुखी विकास का साधन होती है। उच्च शिक्षा के अंतर्गत आध्यात्मिक शक्तियों तथा मानव समाज की आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक समस्याओं का हल खोजा जाता है। डॉ. राजेंद्र प्रसाद- “शिक्षा एक बड़ी शक्ति है इससे वंचित व्यक्ति को पूर्ण रूप से आत्मज्ञान नहीं हो सकता।”

प्रायः शिक्षा के विभिन्न स्तर पर भाषा-सम्बन्धी समस्याएं देखी जाती है जिसका प्रमुख कारण निर्देश का माध्यम है। जिसकी वजह से विद्यार्थी उचित ज्ञान की प्राप्ति नहीं कर पाते हैं और शिक्षा से वंचित रह जाते हैं जिस कारण विद्यार्थियों में असंतोष की भावना उत्पन्न हो जाती है।

निर्देश का माध्यम

किसी शिक्षण संस्थान में जो भाषा शिक्षण के लिए प्रयोग की जाती है उसे संस्थान की शिक्षण या निर्देश का माध्यम कहते हैं। अधिकांश विकसित देशों में मातृभाषा ही प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक निर्देश का माध्यम होती है। भाषा विचार विनिमय का एक निश्चित साधन है। मनुष्य अपने मनोभावों की अभिव्यक्ति भाषा के माध्यम से ही करता है तथा शिक्षण प्रक्रिया भाषा के ही माध्यम से संपन्न होती है। एक बालक की शिक्षा सदैव मातृभाषा से ही प्रारंभ होती है क्योंकि मातृभाषा पर व्यक्ति का सर्वोत्तम अधिकार होता है। भाषा के प्रकार मातृभाषा, प्रादेशिक भाषा, क्षेत्रीय भाषा, राष्ट्रभाषा, अंतर्राष्ट्रीय भाषा, राजभाषा, प्राचीन भाषा। भाषा की समस्या से शिक्षा का क्षेत्र अत्यधिक प्रभावित होता रहा है। ऐसी स्थिति में देश के शासकों के समक्ष समय-समय पर यह समस्या उजागर होती रही है कि उच्च शिक्षा में निर्देश का माध्यम अंग्रेजी भाषा, हिंदी भाषा या कोई अन्य भाषा होनी चाहिए। यह समस्या ब्रिटिश शासनकाल काल से ही चली आ रही है।

निर्देश के माध्यम की समस्या का उद्भव

प्राचीन भारत में शिक्षा के माध्यमों का भाषा समस्या पर कोई विवाद नहीं था। आम जनता दैनिक कामकाज में स्थानीय भाषाओं का प्रयोग करते थे और उच्च शिक्षा या बौद्धिक परिचर्चाओं में संस्कृत भाषा का उपयोग करते थे। शिक्षा के माध्यम की समस्या ब्रिटिश शासनकाल से प्रारंभ होती है। भाषा-संबंधी सवाल सबसे पहले विलेजली (1798-1805) के मन में आया। भाषा संबंधी समस्या उपनिवेशवाद से ही हैं। उपनिवेशवाद से तात्पर्य किसी विदेशी सत्ता द्वारा किसी देश पर अपना राजनीतिक नियंत्रण कर उसे सांस्कृतिक व मानसिक तौर पर अपने वश में करना और अपने अनुसार चलाना है, अर्थात् शासक द्वारा शासित देश पर अपनी बौद्धिक, सांस्कृतिक व सामाजिक विचारधारा थोपने से है। साथ ही देश की अस्मिता और पहचान के नष्ट होने से भी हैं। यह भी कहा जा सकता है कि किसी देश की संस्कृति, भाषा को नष्ट कर वहां के लोगों में गुलामी की मानसिकता के बीज बोना है। उपनिवेशवाद का इतिहास 1600 ई. ईस्ट इंडिया कंपनी के आगमन से शुरू होता है। इसकी सोच व्यवसायिक और लूट पर आधारित थी। ईस्ट इंडिया कंपनी की भाषा अंग्रेजी थी वह इसे ही देश की भाषा बनाना चाहते थे। उपनिवेशवाद के अंतर्गत पहले अर्थव्यवस्था पर नियंत्रण किया जाता है फिर धीरे-धीरे भाषा कला संस्कृति पर कब्जा करके अपने हितों को संपन्न किया जाता है। साथ ही उस देश की मानसिकता में बदलाव किया जाता है। मानसिकता के बदलाव की प्रक्रिया प्राथमिक शिक्षा से आरंभ होती है।

डॉ. हर्षबाला शर्मा (2011) ने अपनी पुस्तक "**औपनिवेशिक मानसिकता और भाषा**" में यह बताते हैं कि—“विदेशी भाषा में बच्चों की शिक्षा होने के कारण उस भाषा के सांस्कृतिक चिन्हों का निर्माण बच्चों की मानसिकता में नहीं होता जैसे कि उनकी अपनी भाषा में शिक्षा के कारण उनकी मानसिकता में अपनी भाषा के सांस्कृतिक चिन्हों का निर्माण होता है।” कंपनी ने जिस भाषा नीति को अपनाया उसकी वजह से भाषा-संबंधी विवाद खड़े हो गए। सन् 1834 में लॉर्ड मैकाले के आगमन पर शिक्षा के विभिन्न स्तर के विद्यालयों में अंग्रेजी भाषा को लागू करने की बात की और धीरे-धीरे अंग्रेजी भाषा का वर्चस्व स्थापित हो गया। (उपनिवेशवाद, 13-17)

यह भाषा अभिजात वर्ग के लिए अधिकांश बोली जाती थी। वह समझ गया था कि भारतीयों को अंग्रेजी भाषा के माध्यम से ही शिक्षित किया जा सकता है। इसप्रकार निर्देश के माध्यम को लेकर देश में सन् 1833 में दो भाषाई दल बनाए गए--

1. अंग्रेजी भाषा का समर्थक

2. प्राच्य भाषाओं का समर्थक

सन् 1835 में मैकाले मिनट आया। मैकाले व्यक्तियों का एक ऐसा वर्ग बनाना चाहते थे "जो रंग व खून से तो भारतीय हो लेकिन बुद्धि, विचार व नैतिकता से अंग्रेज हो।" अपने मैकाले मिनट के माध्यम से इस देश में एक ऐसा संभ्रांत वर्ग उत्पन्न करने में सफल रहा जो रुचियों, अभिमतों, नैतिकता व बुद्धि के लिहाज से अंग्रेज था। इसके फलस्वरूप अंग्रेजों ने शिक्षा संस्थानों में अंग्रेजी भाषा पढ़ाने और निर्देश का माध्यम बनाने की शुरुआत की। इसने सरकारी नौकरियों के लिए शिक्षा के माध्यम में अंग्रेजी भाषा को अनिवार्य कर दिया। इस प्रकार मैकाले ने अंग्रेजी मानसिकता व अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त एक शिक्षित वर्ग तैयार किया। सन् 1826 में अंग्रेजी शिक्षा को केवल उच्च वर्ग तक ही सीमित किया गया क्योंकि कंपनी का मानना था कि-- उच्च वर्ग के लोग निम्न वर्गों के लोगों के मन पर प्रभाव डाल सकते हैं। भाषा की समस्या के कारण सन् 1947 में देश विभाजन हुआ। इस प्रकार भाषा विवाद का प्रारंभ लार्ड मैकाले के आगमन से आरंभ होता है। भाषा की मसले पर बहस 12 सितंबर 1949 को 4:00 बजे दोपहर से शुरू हुई और 14 सितंबर 1949 को दिन में समाप्त हुई। संविधान में 14 भाषाओं को स्वीकार किया गया तथा उन्हें राष्ट्रभाषा घोषित किया। संविधान में 14 भाषाओं को मान्यता प्राप्त है।

संविधान द्वारा स्वीकृत सीमा-रेखा 1965 के बाद भी अंग्रेजी सहायक भाषा के रूप में विद्यमान है और तभी से निर्देश के माध्यम की समस्या शिक्षा के विभिन्न स्तर पर व्याप्त है। शिक्षा के विभिन्न स्तर पर निर्देश का माध्यम क्या होना चाहिए यह विषय आज भी विवाद का कारण है और तभी से शिक्षा के माध्यम की समस्या उभरकर सामने आई। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत राष्ट्रीय सरकार को अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ा, निर्देश के माध्यम की समस्या उनमें से एक थी। इस समस्या के समाधान के लिए कई बार भाषायी सर्वेक्षण किये गये।

सन् 1961 में भारत के विभिन्न भाषाओं का सर्वेक्षण करने से पता चला कि-- लगभग 1200 बोलियां तथा भाषाएं प्रयोग की जाती है। "34.4% लोगों की भाषा मातृभाषा हिंदी है, उर्दू और हिंदी के आंकड़े शामिल करने पर 35.7% है। इस देश में दूसरी भाषा के रूप में अंग्रेजी जानने वालों की संख्या 27.4% थी।" भारत की कुल जनसंख्या का लगभग आधा भाग हिंदी का जानकर है। हिंदी ही हमारी सामाजिक संस्कृति की वाहिका होने में पूर्ण सक्षम है।

विनोबा भावे के अनुसार— “यदि मैंने हिंदी का सहारा न लिया होता तो कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी और असम से केरल तक के गांवों में जाकर भूदान, ग्रामदान का क्रान्तिपूर्ण संदेश जनता तक नहीं पहुंचा सकता था।” हिंदी जन-जन की भाषा है।

विस्वे (2017) के अनुसार—“7000 से अधिक ज्ञात जीवित भाषाएं हैं और अधिकांश बच्चे ऐसे वातावरण में बड़े होते हैं जहां एक से अधिक भाषाएं बोली जाती हैं।”

2011 की जनगणना के अनुसार— “22 अधिकारिक भाषाओं और 19500 से अधिक मातृभाषाएं हैं। पूरे भारत में बहुभाषी होना आदर्श है इस बात में कोई संदेह नहीं है। इस तथ्य को नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में मान्यता दी गई है जिसमें बहुभाषावाद और भाषा-शिक्षण के महत्व पर विशेष रूप से ध्यान दिया गया है। इसे मौलिक सिद्धांतों में सूचीबद्ध किया गया है।”

यूनेस्को ने 2009 में प्रकाशित एक Report “(Atlas of world: language in danger)” में दुनिया भर की भाषाओं पर मडराने वाले खतरे के बारे में बताया और कहा कि—“196 भाषाएं मरने के कगार पर हैं। अमेरिका में 53 भाषाएं मर चुकी हैं और 71 भाषाएं मरने की करीब हैं। दुनिया के भाषा वैज्ञानिक यह मानते हैं कि दुनिया में लगभग 7000 भाषाएं हैं और जिस तरह से भूमंडलीकरण के दौरान अंग्रेजी की आंधी चल रही है, उस हिसाब से इस सदी के अंत तक 7000 में से आधी भाषाएं मर जाएंगी। पहले वे भाषाएं मरेगी जो केवल बोलचाल की है। फिर वह भाषाएं मरेगी जिनकी केवल लिपि है और अंत में जिनकी केवल लिपि है, बोली भी जाती हैं तथा प्रिंटिंग भी हैं। इस समय अंग्रेजी दुनिया भर में बोली जाने वाली 7000 भाषाओं में से 2500 भाषाओं के लिए खतरा बनती जा रही है। दुनिया भर में बोली जाने वाली लगभग 90% भाषाएं 2050 तक विलुप्त होने के कगार पर है।”

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020)- भारतीय भाषाओं के समुचित ध्यान व देखभाल न करने के कारण देश में पिछले 50 वर्षों में 220 भाषाएं ही हैं। यूनेस्को ने 197 भाषाओं को लुप्तप्राय घोषित किया है। इसके साथ ही जिन भाषाओं की लिपि नहीं है वह भी लुप्ति के कगार पर है।

न्यूगी तथा थ्योगों का मानना है कि—“भाषाएं न तो कभी बूढ़ी होती हैं और न मरती हैं। वह अपनी संरचना में किसी तात्विक दोष के कारण आधुनिक युग के लिए अप्रासंगिक कभी नहीं होती। वह तभी गुम होती है जब समाज के प्रमुख प्रभुत्वाशाली वर्ग के पास उनकी कोई उपयोगिता नहीं रह जाती। उन्होंने यह भी कहा कि अंग्रेजी ने जो अन्य भाषाओं और संस्कृतियों पर गहरा कहर ढाया है उससे बचना होगा।” यदि भाषा को जीवित रखना है तो उसे बोलने वाले समुदायों को आदर और सम्मान देना होगा जिसके वे अधिकारी हैं। किसी

समुदाय की भाषा के निर्माण में कई शताब्दियां गुजर जाती हैं। मानव समुदाय द्वारा निर्मित सभी भाषाएं हमारी सामूहिक सांस्कृतिक धरोहर हैं। यह हमारी जिम्मेदारी है कि उन्हें (भाषाओं को) विश्वव्यापी भाषा संहार का सामना न करना पड़े। इस प्रकार भाषाओं को बचाने के लिए अनेक विचारकों ने अपने-अपने मत दिए तथा भाषा-सम्बन्धी समस्याओं के बारे में बात की।

उच्च कक्षा में प्रवेश लेने पर पूर्व संस्था में अध्ययन हेतु प्रयोग की जाने वाली भाषा में अंतर होने से विद्यार्थियों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। भाषा की समस्या के कारण ही व्यवसायिक क्षेत्र में भी विद्यार्थियों को इससे संबंधित समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इस तरह से कठिनाइयां उत्पन्न होने पर ही छात्रों में असंतोष की भावना का उदय होता है। निर्देश के माध्यम (हिंदी माध्यम, अंग्रेजी माध्यम) के इस दोहरेपन की शिक्षा में विद्यार्थी इस कदर फंसता चला जाता है कि उसमें असंतोष की स्थिति आ जाती है।

यूनेस्को (2016)- लगभग 40% बच्चे ऐसी भाषा में शिक्षा ग्रहण करते हैं जिसे वह नहीं समझ पाते हैं। यह उनके सीखने की प्रक्रिया पर नकारात्मक प्रभाव डालता है। कुछ माता-पिता अपने बच्चों के लिए अंग्रेजी माध्यम के विद्यालयों में दाखिला कराते हैं क्योंकि वे अंग्रेजी में दक्षता को बेहतर अवसरों की कुंजी के रूप में देखते हैं। व्यापक स्तर पर निर्देश का माध्यम अंग्रेजी ही चाहते हैं। यह एक व्यापक भ्रांति ही है कि अकादमी विषयों को अंग्रेजी माध्यम से अध्ययन करने पर ही कौशल को प्राप्त किया जा सकता है। जब किसी विषय को अंग्रेजी या किसी अन्य अतिरिक्त भाषा में पढ़ाया जाता है तो विद्यार्थी बेहतर तरीके से सीखते और समझते हैं और दोनों माध्यमों के विद्यार्थियों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है क्योंकि वे परिचित भाषा में विषयों को पढ़ते हैं। **राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020) ने इस बात पर जोर दिया है कि—**“सभी विद्यार्थियों को सभी भाषाओं को उच्च गुणवत्ता के साथ पढ़ाया जाएगा। किसी भाषा को अच्छी तरह से सिखाने के लिए उसे उस भाषा को निर्देश का माध्यम या शिक्षा का माध्यम होने की आवश्यकता नहीं है। निर्देश का माध्यम भाषा ज्ञान या अन्य भाषाओं को सीखने में एक सहायक माध्यम के रूप में कार्य कर सकता है।”

विद्यालयी शिक्षा में निर्देश का माध्यम तथा उच्च शिक्षा में निर्देश का माध्यम दोनों एक-दूसरे से अलग है तथा स्वयं में चुनौतीपूर्ण है। उच्च स्तर पर विद्यार्थियों को भाषाई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है क्योंकि अधिकांशतः उच्च स्तर की शिक्षा में निर्देश का माध्यम अंग्रेजी माध्यम में ही होता है जो कि विद्यालय या घर की भाषा से बिल्कुल विपरीत होता है। एक बालक की शिक्षा सदैव मातृभाषा से ही प्रारंभ होती है क्योंकि मातृभाषा पर व्यक्ति का

सर्वोत्तम अधिकार होता है। अपरिचित भाषा या दूसरी भाषा में अपने पाठ्यक्रम का अध्ययन करने वाले विद्यार्थी उतना अच्छा नहीं सीख पाते जितना कि परिचित या मातृभाषा में सकते हैं। यह विद्यार्थी किस प्रकार आवश्यक कौशल का विकास तथा कौशल को विकसित करते हैं? यह कई देशों में अनुसंधान का महत्वपूर्ण क्षेत्र बना हुआ है? भारत में यह विषय अत्यधिक प्रासंगिक है।

भारत और अन्य एशियाई देशों में किए गए अध्ययन से पता लगता है कि- "अंग्रेजी भाषा के बजाय क्षेत्रीय माध्यम का उपयोग करने वाले विद्यार्थियों की अधिगम प्रतिफल (Learning Outcome) पर Positive Impact पड़ता है।"

Reading Matures Conceptual Framework का प्रत्येक घटक यह मानता है कि- "विद्यार्थियों को ऐसी भाषा में पढ़ना सिखाया जाता है जिस भाषा का वे उपयोग करते हैं व जिसे समझते हैं। यह प्रणाली सभी विद्यार्थियों के बीच सीखने को बढ़ावा देने के लिए सीखने के सिद्धांतों के लिए Universal Design को शामिल करती है।"

महात्मा गांधी का मानना है कि- "बच्चे की शिक्षा ऐसी भाषा में होनी चाहिए जो उसके सर्वोत्तम गुणों को उभारे तथा वह शिक्षा उसकी मातृभाषा में ही होनी चाहिए। वह चाहते थे कि शिक्षा का माध्यम प्रांतीय भाषा हो। इस प्रकार हिंदी, अंग्रेजी के विद्यार्थियों के बीच एक खाई बन गई। नए शासक वर्ग ने व्यवहारिक रूप से अंग्रेजों की भाषा और उनकी संस्कृतियों को ही अपने शासन तंत्र की भाषा के रूप में अपनाया, जिससे शासक तथा शासकों के बीच दूरी बनी रहे। अतः यह स्वीकार्य था कि जिस देश की भाषाएं अलग-अलग होंगी वह देश अर्थव्यवस्था, शिक्षा और संस्कृति के मामले में मजबूत नहीं हो सकता। अतः भाषाएं अभिव्यक्ति का साधन मात्र नहीं होती बल्कि उनमें नई संस्कृति को विकसित करने की ताकत भी होती है।"

छात्र असंतोष की प्रमुख समस्या भाषा (हिंदी भाषा, अंग्रेजी भाषा) की समस्या है। सन् 1962 ई. में अंग्रेजी को हटाकर हिंदी भाषा का प्रयोग करना था जिससे हिंदी राज्यभाषा के पद पर आसीन हो सके। किंतु दक्षिणवासियों के हिंदी विरोध दृष्टिकोण में कोई अंतर नहीं आया। अनिवार्य शिक्षा अधिनियम के अनुसार- माध्यमिक स्तर तक राजभाषा तथा क्षेत्रीय भाषा को ही शिक्षा का माध्यम स्वीकार किया गया है किंतु उच्च स्तर पर निर्देश के माध्यम की समस्या बनी हुई है कि निर्देश का माध्यम अंग्रेजी रखा जाए या हिंदी। आयोगों ने मातृभाषा व क्षेत्रीय भाषाओं को ही शिक्षा का माध्यम स्वीकार किया है। इस समस्या हेतु यह भी सुझाव

दिया गया कि यदि विश्वविद्यालय के अंतर्गत 40% अल्पभाषी छात्र हैं तो प्रदेश की सरकार का यह कर्तव्य है कि वह उनके लिए उनके ही प्रदेश की भाषा के माध्यम से शिक्षा की व्यवस्था करें या शिक्षा ग्रहण कराएं। संपर्क भाषा के रूप में अंग्रेजी का प्रयोग किया जाता है। अंग्रेजी भाषी भारत में 10% से भी कम है। अब सवाल ये उठता है कि ऐसी स्थिति में अपशिष्ट 90% लोगों के लिए संपर्क भाषा कैसे बन सकती हैं? इसका कारण यह है कि अहिंदी भाषी राज्यों में अधिक है। इसलिए निर्देश या शिक्षा का माध्यम विवाद की समस्या बनी हुई है। दक्षिण प्रांतों में हिंदी की उपेक्षा की गई, तमिलनाडु राज्यों में हिंदी का बहुत विरोध किया गया जबकि उत्तर राज्यों में हिंदी भाषा पर जोर दिया गया। अंग्रेजी पर विशेष जोर नहीं दिए जाने के कारण अंग्रेजी माध्यम के विद्यालयों की ओर आकर्षण बढ़ा और अंग्रेजी भाषा की तरफ भी, साथ ही साथ दोनों भाषाओं व शिक्षा का उचित ज्ञान न होने के कारण शिक्षा की समस्या धीरे-धीरे विकराल रूप धारण करती चली गई जिसके कारण अनेक राज्य देश को बिखराव, विखंडन की ओर ले जा रहे हैं अर्थात् अलगाव की प्रवृत्तियां पनप रही हैं। **हंसराज**—भाषा-समस्या हल होने के बजाय अत्यधिक जटिल व उलझती जा रही है। भाषा-समस्या या विवाद के कारण देश लगभग दो वर्गों में बांटा गया है। दक्षिण राज्यों में तमिलनाडु की भाषा तमिल, केरल की मलयालम, आंध्र की तेलुगू तथा कर्नाटक की कन्नड़ है। इन राज्यों में विशेष रूप से हिंदी का विरोध बना हुआ है। विशेषता तमिल भाषी हिंदी के अत्यधिक विरोधी हैं। तमिलनाडु आंदोलन सन् 1937 अन्नादुरैई ने किया। चक्रवर्ती रामगोपालचारी के सरकार ने मद्रास प्रांत में हिंदी को लाने का समर्थन किया जिसका विरोध द्रविड़ कषगन ने किया और सन् 1951 में फिर आंदोलन शुरू हुए। हिंदीभाषी प्रदेश हिंदी को राष्ट्रभाषा एवं राजभाषा बनाने के पक्ष में खड़े हैं वही दूसरी तरफ अहिंदी भाषी प्रदेश (दक्षिणी प्रांत) हिंदी का तीव्र गति से विरोध कर रहे हैं। वह हिंदी को किसी भी रूप में स्वीकारने को तैयार नहीं है, इसलिए भाषा की समस्या विकराल होती चली जा रही है। भाषाओं की दृष्टि से भारत एक अथाह समुद्र है अर्थात् एक विशाल देश है। जहां विभिन्न भाषाएं बोली जाती हैं। शिक्षा के क्षेत्र में भी भाषा के माध्यम के रूप में अंग्रेजी का प्रयोग किया जाने लगा। धीरे-धीरे अंग्रेजी का वर्चस्व संपूर्ण भारतवर्ष में फैलने लगा। विशेष रूप से देश में अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त व्यक्ति विशिष्ट स्थान प्राप्त करने लगे। हमारे देश में अधिकांशतः अंग्रेजी पढ़े-लिखे व्यक्ति संपर्क भाषा के रूप में अंग्रेजी का प्रयोग करते हैं परंतु अधिकांश आम जनता संपर्क भाषा के लिए हिंदी का प्रयोग करते हैं। जैसे--बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, उत्तराखंड आदि।

इस प्रकार हमारे देश में संपर्क भाषा के रूप में हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं का प्रयोग किया जाता है। शिक्षा के स्तरों का भी यही हाल है। प्रायः देखा जाता है कि कक्षाओं में यदि अध्यापक अंग्रेजी भाषा में अध्यापन करते हैं तो हिंदीभाषी छात्र विरोध करने लगते हैं तथा हिंदी में अध्यापन करने पर अंग्रेजीभाषी विरोध करने लगते हैं। इसका कारण यह है कि वे पाठ्यक्रम समझ नहीं पाते या उचित ज्ञान प्राप्त नहीं कर पाते तथा उचित शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। शिक्षा में हिंदी और अंग्रेजी अनेक भाषाओं और बोर्डों की वजह से एक बहुत बड़ी खाई बन गई है और अंग्रेजी माध्यम को ही कौशल का आधार मान लिया गया है। चिकित्सा, अभियांत्रिकी, विज्ञान, गणित और प्रबंधन में हिंदी और भारतीय भाषाओं को अनदेखा किया जाता है तथा ऐसा एहसास कराया जाता है कि हिंदी में इन विषयों को नहीं पढ़ा जा सकता जबकि उत्तर प्रदेश और दूसरे बोर्डों में लाखों विद्यार्थी हिंदी माध्यम से इन विषयों को पढ़ते हैं लेकिन कॉलेज और विश्वविद्यालयी स्तर पर अंग्रेजी में पढ़ाया जाता है। इस प्रकार दोनों ही माध्यम के विद्यार्थियों के लिए कुछ सीखना, समझना एक कठिन समस्या व चुनौती है। इस समस्या ने धीरे-धीरे अपने पैर विद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों तक फैला लिए हैं। यह समस्या निर्देश के माध्यम के रूप में उभर कर सामने आई जो देश को ही नहीं अपितु शिक्षा के माध्यम को भी दो भागों में बांटती हैं.. 1. हिंदी माध्यम 2. अंग्रेजी माध्यम

इन छात्रों के भी मध्य एक खाई बन गई है। इस खाई ने समाज को दो वर्गों में बांट दिया है..1.उच्च वर्ग 2.निम्न वर्ग

उच्च वर्ग तथा मध्यम वर्ग के बच्चों का आकर्षण केंद्र हमेशा से पब्लिक व कान्वेंट स्कूल ही रहे हैं, जहां पर अंग्रेजी भाषा के माध्यम से शिक्षा दी जाती है। अतः अंग्रेजी माध्यम को ही मुख्य माध्यम रखना चाहते हैं और वे उसे ही श्रेष्ठ मानते हैं। अंग्रेजी भाषा आज प्रभुता संपन्न व्यक्तियों के आचरण का माध्यम है। साथ ही शिक्षक वर्ग की सामाजिक अस्मिता की भाषा अंग्रेजी भाषा बनती जा रही है। अतः कहा जाता है कि हिंदी व अन्य प्रादेशिक भाषाओं की तुलना में अंग्रेजी अत्यधिक सक्षम व विकसित होती चली जा रही है। अंग्रेजी वैज्ञानिक चिंतन व सूक्ष्म विश्लेषण के लिए अधिक समर्थ भाषा है। यह अंतरराष्ट्रीय संपर्क के लिए एक सिद्ध भाषा है। इसके विपरीत निम्न वर्ग के बच्चे सरकारी स्कूलों में पढ़े हुए होते हैं जहां निर्देश का माध्यम हिंदी भाषा है। प्राथमिक स्तर से हिंदी माध्यम में पढ़े होने के कारण वे उच्च स्तर तक नहीं पहुंच पाते हैं क्योंकि ज्यादातर विश्वविद्यालयों में अंग्रेजी माध्यम में निर्देश दिये जाता है जो कि निम्न वर्ग के विद्यार्थी नहीं समझ पाते हैं तथा उच्च स्तर की शिक्षा को बीच में ही छोड़ कर चले जाते हैं।

राम मनोहर लोहिया के अनुसार—“भारत में पूंजी ही नहीं अपितु जाति और भाषा भी वर्ग का निर्माण करते हैं और उत्पादन के साधन बनते हैं।” इन्होंने पाया कि- देश में 23% ही अंग्रेजी बोलने वाले हैं तथा इन लोगों ने देश की विशाल जनसंख्या की नौकरियों पर कब्जा कर लिया है। लोहिया अंग्रेजी भाषा के सर्वाधिक प्रयोग के खिलाफ थे। इसलिए उन्होंने अंग्रेजी हटाओ आंदोलन शुरू किया।

इसी विरोध के कारण विश्वविद्यालयों में निर्देश के माध्यम की समस्या बरकरार है। जिसके कारण हिंदीभाषी प्रदेशों में विद्यार्थियों को हिंदी के अतिरिक्त अन्य भाषाओं का अध्ययन करना अनिवार्य हो गया है जिसे अकादमिक दृष्टि से न्यायोचित नहीं कहा जा सकता। इससे हिंदीभाषी में अंग्रेजी भाषा का विरोध तथा अहिंदी भाषी क्षेत्रों में हिंदी भाषा का विरोध होता रहेगा। अतः हिंदी को राष्ट्रभाषा और राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने में यह निम्नलिखित तत्व विशेष रूप से बाधा उत्पन्न कर रहे हैं। यह समस्या क्षेत्रों तक सीमित न रहकर शिक्षा के स्तरों तक अपना पैर फैला चुकी है। व्यापक स्तर पर इस समस्या को देखा जा सकता है। मेडिकल, इंजीनियरिंग, सामाजिक विज्ञान, तकनीकी, बैंकिंग, पत्रकारिता, व्यवसाय यहां तक की कला संबंधी शिक्षा अंग्रेजी भाषा में देने की व्यवस्था शुरू की। देश में ऐसा माहौल बन गया कि अंग्रेजी माध्यम से पढ़े-लिखे वर्गों के लिए नौकरियों के मार्ग प्रशस्त होते चले गए। इसके फलस्वरूप प्राथमिक स्तर पर भी अंग्रेजी भाषा में शिक्षा दी जाने की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। इन शिक्षा संस्थानों ने अपनी शिक्षा पद्धति, परीक्षा पद्धति व कार्यप्रणाली में अंग्रेजी के वर्चस्व को बनाए रखा। विभिन्न प्रतियोगी परीक्षाओं में यद्यपि उत्तर देने का माध्यम हिंदी या क्षेत्रीय भाषा हो गया है किंतु अभी भी अंग्रेजी भाषा परीक्षा का एक अनिवार्य विषय बना हुआ है। अधिकांश सरकारी पदों पर प्रतियोगी परीक्षाओं व साक्षात्कारों में उत्तीर्ण परीक्षार्थी या प्रत्याशी ही नियुक्ति किए जाते हैं। जिसके कारण विद्यार्थियों का रुझान हिंदी भाषा न होकर अंग्रेजी भाषा की तरफ अधिक होता जा रहा है। ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थी और भारतीय भाषा में पढ़ें बच्चों को अंग्रेजी भाषा नहीं आती इसलिए वे सीमित अवसरों के कारण आधुनिक सुविधाओं में पढ़ें विद्यार्थियों का मुकाबला करने में पिछड़ जाते हैं और उच्च शिक्षा ग्रहण करने से वंचित रह जाते हैं। हिंदी माध्यम के मेधावी विद्यार्थी परीक्षा से पहले ही वंचित कर दिए जाते हैं या हो जाते हैं। इस प्रकार से विद्यार्थी बेरोजगारी की मार झेलते हैं तथा ज्ञान और कौशल के बावजूद भी उच्च पदों व सम्मान से वंचित हो जाते हैं। **गुन्नार मिर्डल के अनुसार**—“विश्वविद्यालय की उपाधियाँ सरकारी नौकरियों के लिए पासपोर्ट थीं। शिक्षा विद्यार्थियों की नौकरी के लिए, न कि जीवन के लिए तैयार करने के सीमित उद्देश्य से प्रदान

की जाती है। उच्च शिक्षा की प्राप्ति का मात्र एक ही लक्ष्य है विश्वविद्यालय की उपाधि से अलंकृत होकर सरकारी या गैर-सरकारी नौकरी प्राप्त करना। विश्वविद्यालय द्वारा अध्ययन किये जाने वाले विषयों तथा उपाधियों में अंतर होता है तथा उच्च वर्ग तथा निम्न वर्ग के विद्यार्थियों के लिए उच्च शिक्षा की पहुंच में अंतर होता है जिसके कारण कुछ विद्यार्थी ही सरकारी या गैर-सरकारी पदों पर नियुक्त होते हैं और अधिकांश बेरोजगारी की मार झेलते रहते हैं। (तुलनात्मक शिक्षा, 258-60)

उच्च शिक्षा के स्तर पर भाषा समस्या की एक वजह यह भी है। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि आज के युग में अंग्रेजी भाषा का ज्ञान आवश्यक है लेकिन यह समझना भी आवश्यक है कि यह भाषा ज्ञान, दक्षता, कौशल को साबित करने की या परखने की एकमात्र कसौटी नहीं है।

हाल ही में केंब्रिज विश्वविद्यालय के नेतृत्व में 4 वर्षीय मल्टीलीला परियोजना ने यह पता लगाया कि—“क्या विद्यार्थी एक ऐसी भाषा के माध्यम से सीखते हैं जो उनकी घरेलू भाषा के समान नहीं है उन विद्यार्थियों की तुलना में जिनकी घर अथवा विद्यालय की भाषाएं समान है।” अपरिचित भाषा या दूसरी भाषा में अपने पाठ्यक्रम का अध्ययन करने वाले विद्यार्थी उतना अच्छा नहीं सीख पाते जितना कि परिचित या मातृभाषा या राजभाषा में सीखते हैं।

MHRD द्वारा प्रकाशित राष्ट्रीय शिक्षा नीति, दस्तावेज में कहा गया है कि -- “जहां तक संभव हो शिक्षा का माध्यम ग्रेड 5, अधिमानतः ग्रेड 8 और उससे आगे तक शिक्षा का माध्यम घरेलू भाषा, मातृभाषा, स्थानीय भाषा और क्षेत्रीय भाषा होगी।” **सेठ गोविंद राम-** “मैं नहीं समझता हूँ कि छात्रों को अंग्रेजी अनिवार्य रूप से क्यों पढ़नी चाहिए? मैं अंग्रेजी या अन्य किसी भाषा के लिखने के विरोध में नहीं हूँ किंतु इसे सीखने की अनिवार्यता नहीं होनी चाहिए।”

उच्च शिक्षा में 83 कॉलेजों, विश्वविद्यालयों में निर्देश के माध्यम के अध्ययनों की समीक्षा के बाद यह समझने का प्रयास किया गया कि-- क्या दूसरी भाषा के रूप में अंग्रेजी भाषा के माध्यम से अकादमिक विषयों का पढ़ाना, सामग्री पर हानिकारक प्रभाव के बिना अंग्रेजी दक्षता को विकसित करने के लिए फायदेमंद है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 में प्राथमिक से लेकर उच्च स्तर तक के विद्यार्थियों को क्षेत्रीय भाषा में शिक्षा देने की बात की इसके साथ ही संस्कृति के संरक्षण एवम् संवर्धन की बात की।

इस देश में इससे बड़ी विडंबना और क्या होगी कि राजभाषा अधिकारी बनने के लिए भी अंग्रेजी में स्नातक, परास्नातक डिग्री अनिवार्य बना दी है तथा इसके साथ ही हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देने वाले राजभाषा विभाग मात्र एक अनुवाद विभाग बनकर रह गया है। इसके साथ ही हिंदी पत्रकारिता भी अनुवाद पत्रकारिता के रूप में ही विकसित होती चली जा रही है। इसका कारण आज देश में मौलिक शोध का अभाव भी इसलिए है कि प्रोफेसर अंग्रेजी माध्यमों पर ज्यादा जोर देते हैं जबकि विद्यार्थी इस माध्यम का अभ्यस्त नहीं होता है। जिसकी वजह के विद्यार्थी अपनी पूरी प्रतिभा अंग्रेजी भाषा के मापदंडों तथा प्रविधियों को सीखने में लगा देता है। जिसके कारण उन विद्यार्थियों के मौलिक विचार, मौलिक खोज विकसित होने से पहले ही खत्म हो जाते हैं। ऐसे शोध केवल अंग्रेजी में उपलब्ध होने के कारण शैक्षिक संस्थानों, पुस्तकालयों, सेमिनारों का मात्र एक हिस्सा बनकर रह जाते हैं तथा यह शोध हिंदी भाषा या भारतीय भाषा में न होने के कारण आम जनता इनसे (शोध) नहीं जुड़ पाते हैं जिसके कारण ज्ञान तथा उनके उपयोग से वंचित रह जाते हैं।

आजकल सरकार की नीति में एक कमजोर पक्ष दिखाई देता है। वह केवल विद्यार्थियों को शिक्षित न बनाकर साक्षर बनाने पर ही मौलिक जोर दे रहा है। समानता उच्च शिक्षा प्रणाली का यही हाल है। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में विदेशी भाषा (अंग्रेजी भाषा) के प्रयोग को गुणवत्ता का मानक बनाना भी उच्च शिक्षा को अत्यधिक जटिल व दुरुह बना रहा है। हमारी बहुसंख्यक आबादी अंग्रेजी के ज्ञान से वंचित है जिसके कारण उच्च शिक्षा एक अनावश्यक अपव्यय के समान है। हमारी उच्च शिक्षा दिन-प्रतिदिन अपनी सांस्कृतिक विरासत से दूर होती चली जा रही है क्योंकि जब भाषा बदलती है तो वेशभूषा, विचार भी बदलती हैं। इसी क्रम में हम अपनी संस्कृति, अपनी सभ्यता से वंचित होते चले जा रहे हैं। उच्च शिक्षा में निर्देश के माध्यम संबंधी समस्या उत्पन्न होने के दो प्रमुख कारण जिम्मेदार हैं- 1. अंग्रेजी भाषा का दीर्घकाल से ही माध्यम के रूप में प्रतिष्ठित होना। 2. भारतीय संविधान में हिंदी को राष्ट्रभाषा घोषित किया जाना।

भारतीय संविधान में इन समस्याओं से निपटने के लिए अनेक महत्वपूर्ण प्रावधान किए गए हैं। शिक्षा के माध्यम में किस भाषा का प्रयोग किया जाए इस संबंध में भिन्न-भिन्न संस्थाओं में भिन्न-भिन्न नीतियां हैं---

राधाकृष्णन आयोग (1948-49)- "उच्च शिक्षा का माध्यम मातृभाषा ही होना चाहिए। इसमें हिंदी के साथ-साथ अन्य भारतीय भाषाओं का अध्ययन कराया जाना चाहिए। साथ ही यह

कहा कि- शीघ्रातिशीघ्र अंग्रेजी के स्थान पर किसी भारतीय भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाया जाना चाहिए। साथ ही यह भी सुझाव दिया कि उच्च शिक्षा का माध्यम प्रादेशिक भाषाओं को बनाया जाना चाहिए।”

मुदालियर आयोग (1952-53)- “आयोग ने स्पष्ट रूप से कहा कि अंग्रेजी अधिक काल तक नहीं चल सकती है तथा यह स्थान शीघ्र ही हिंदी को दिया जाना चाहिए। हिंदी को विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में अनिवार्य विषय बनाना चाहिए।”

सन् 1955 भाषा आयोग- “बी. जी. खेर की अध्यक्षता में भाषा आयोग ने शिक्षा का माध्यम हिंदी को बनाने का सुझाव दिया। यह भी सुझाव दिया कि सभी विश्वविद्यालय की परीक्षाएं हिंदी में ले, हो सके तो क्षेत्रीय भाषाओं को माध्यम बनाया जा सकता है।”

सन् 1963 में हिंदी को राजकाज की भाषा बनाने के लिए एक बिल प्रस्तुत किया गया। भाषायी समस्या को हल करने से पहले यह स्वीकारना होगा कि भारत एक देश है। इसकी केवल एक ही भाषा हो सकती है। उच्च शिक्षा के माध्यम के रूप में एक ही भाषा होनी चाहिए। भाषा संचार का प्रमुख साधन है और इसी के आधार पर राष्ट्रीय पहचान बनती है। भाषा की समस्या का निवारण के लिए अंग्रेजी भाषा को न तो अनिवार्य किया जाना चाहिए और न ही पूरी तरह हटाया जाना चाहिए अर्थात् हिंदी के विकल्प के रूप में कोई भी भाषा नहीं होनी चाहिए क्योंकि हिंदी भाषा ही हमारी सहज भाषा है। सन् 1976, 17 मार्च को राजभाषा विभाग ने हिंदी को सरकारी कामकाज में “सरल हिंदी का प्रयोग” की नीति को स्पष्ट किया और ‘प्रतिवर्ष 14 सितंबर को हिंदी दिवस’ पर हिंदी सप्ताह के रूप में मनाया जाता है। ‘प्रतिवर्ष 10 जनवरी को विश्व हिंदी दिवस’ मनाया जाता है।

समस्या का कथन—

समस्या का निर्धारण ही सामाजिक अनुसंधान का प्रथम चरण होता है। सामाजिक घटनाएं निरंतर घटित होती रहती हैं परंतु उनमें समस्या क्या है? इसको तर्कबंद करना आवश्यक है अर्थात् समस्या का चुनाव इस प्रकार किया जाना चाहिए ताकि उसमें तथ्यगत प्रकाश डाला जा सके। शोधकर्ता को उसी विषय का चयन करना चाहिए जिसमें उसकी विशेष रूचि हो। समाज में घटित घटनाओं को जब हम एक समस्या के रूप में देखते हैं तभी वह घटना अनुसंधान का विषय बनती है। जैसे-- मदिरापान, धूम्रपान, दहेज, बालश्रम आदि।

अनुसंधान की समस्या का निरूपण किया जाता है इसलिए वह परिलक्षित होती है। अनुसंधान के उद्देश्यानुसार ही समस्या का केंद्र बिंदु निर्धारित किया जाता है। अनुसंधान की समस्या ऐसी होनी चाहिए कि वर्तमान परिस्थितियों तथा भविष्य में आने वाली परिस्थितियों में सुधार लाया जा सके क्योंकि अनुसंधान के लिए शोध न तो शोधकर्ता के लिए उपयोगी सिद्ध होगी और न ही विषय की समृद्धि के लिए।

शिक्षा का संकट विकराल होता चला जा रहा है अतः यह कहना सर्वथा उचित होगा कि विभेदीकरण और विशेषीकरण की यह प्रक्रिया सकारात्मक रूप से चल रही है। वर्तमान समय में अनिवार्य शिक्षा अधिनियम के अनुसार- "माध्यमिक स्तर पर मातृभाषा, क्षेत्रीय भाषा को निर्देश का माध्यम स्वीकार किया गया है परंतु उच्च स्तर पर आज भी यह समस्या बनी हुई है कि क्या इस स्तर पर निर्देश का माध्यम अंग्रेजी ही होना चाहिए? अनेक विश्वविद्यालयों में अधिकांश विद्यार्थियों को हिंदी भाषा के माध्यम शिक्षा प्रदान की जा रही है ऐसा हिंदी भाषी क्षेत्रों में है। इसके विपरीत केंद्र शासित क्षेत्रों व केंद्रीय विश्वविद्यालय में निर्देश का माध्यम अंग्रेजी ही है। नगरपालिका तथा जिला परिषद के प्राथमिक विद्यालयों में मुफ्त शिक्षा, मिड डे मील का प्रावधान है जिसका माध्यम हिंदी भाषा है। वहीं दूसरी तरफ 300-1000 मासिक भुगतान वाले निजी क्षेत्रों के अंग्रेजी स्कूल। इतना बड़ा अंतर जहां प्राइमरी स्तर पर है तो उच्च शिक्षा के क्षेत्र की क्या स्थिति होगी यह एक गंभीर समस्या है?

इस प्रकार अंग्रेजी व हिंदी भाषा के मुद्दे में फंसकर निर्देश के माध्यम की भाषा एक गंभीर समस्या बन गई है और इस समस्या ने शिक्षा के स्तर को निम्न स्थिति में पहुंचा दिया है। निर्देश के माध्यम के बीच में फंसकर विद्यार्थी उलझकर रह गए हैं। वह ज्यादातर समय द्विभाषी को सीखने में लगा देते हैं। इसी असमंजस में वह खुद को निम्न समझने लगता है और धीरे-धीरे अपना आत्मविश्वास खो देता है और पतन के मार्ग पर अग्रसर होता चला जाता है। सरकारी नीतियों और प्रावधानों के कारण एक बड़ी आबादी शिक्षा रोजगार और न्याय से वंचित है तथा उत्पीड़न का शिकार रही है अर्थात् शिक्षा, रोजगार और न्यायप्रणाली को भाषा के अनुरूप बना दिया है जिसका प्रतिनिधित्व देश के संपन्न लोग करते हैं जो कि अधिकतर अंग्रेजी माध्यम के माध्यम से ही शिक्षा ग्रहण करते हैं। जिस तरह से शिक्षा नीति और प्रतियोगी परीक्षाओं का ढांचा बना दिया गया है वह पूरी तरह से ग्रामीण और हिंदी माध्यम के विद्यार्थियों के लिए भाषा - विरोधी है। आजादी के बाद से ही शिक्षा या प्रतियोगी परीक्षाओं, रोजगारों में हिंदी और भाषाई भाषाओं की उपेक्षा की गई है। हिंदी भाषा में सफलता हासिल करने के बावजूद भी विद्यार्थियों को कई स्तर पर हतोत्साहित होना पड़ता है या किया जाता है। इसके

विपरीत अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा हासिल करने वाले विद्यार्थियों या अंग्रेजीभाषी का प्रतिशत 3% से अधिक नहीं है यही कारण है कि प्रतियोगी परीक्षाओं में हिंदी माध्यम और भारतीय भाषा के माध्यम से प्रतियोगिता की सफलता का प्रतिशत बहुत कम है।

उच्च शिक्षा के स्तर का क्या तात्पर्य था? हमने उच्च शिक्षा के किस स्तर की कल्पना की थी? हमारी क्या अपेक्षाएं थी? क्या वह हमारी अपेक्षाओं को पूरा करने में असमर्थ है या नहीं? क्या शिक्षा का हास हुआ है यदि हां तो किस रूप में? क्या अपनी भारतीय संस्कृति, धरोहर में इतनी शक्ति व क्षमता नहीं है कि वह बिना पश्चिमी संस्कृति का सहारा लिए आत्मनिर्भर बना सके? क्या हमारी अपनी भाषा उपयुक्त संवाद के लिए अपर्याप्त हैं? क्या अभिव्यक्ति (Manifestation) का एकमात्र अध्ययन पश्चिमी भाषा ही है? जीवन के प्रत्येक प्रश्नों का समाधान करने वाली हमारी शिक्षा पद्धति स्वयं प्रश्नचिह्न के घेरे में कैद है। इन्हीं समस्याओं का अध्ययन प्रस्तुत शोध में किया गया है।

अध्ययन का महत्व-

शिक्षा वर्तमान एवं भविष्य के लिए अद्भुत निवेश है अर्थात् कहने का आशय यह है कि शिक्षा द्वारा किसी देश की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, औद्योगिक व सांस्कृतिक विकास संभव होता है। माध्यमिक शिक्षा तथा उच्च शिक्षा के विकास का आधार प्राथमिक शिक्षा ही है। जितना ही प्राथमिक स्तर की शिक्षा का प्रसार, विकास, प्रगति और उन्नति होगी उतना ही उच्च स्तर की शिक्षाओं की भी होगी। देश के सुनहरे भविष्य का निर्माण विधानसभा और संसद में न होकर विद्यालयों, कॉलेजों तथा विश्वविद्यालयों में हो रहा है। भाषा-संबंधी विचार राजनीतिक दृष्टिकोण से न करके यदि शैक्षणिक, सामाजिक दृष्टिकोण से किया जाए तो शायद भाषा-संबंधी समस्या समाप्त हो जाए। यह समस्या विद्यालयों, विश्वविद्यालयों में निर्देश के माध्यमों के रूप में देखी जा सकती है। जिसका समाधान करना अतिआवश्यक है क्योंकि शिक्षा मानव की ऐसी मूलभूत आवश्यकता है जो उसके बौद्धिक एवं व्यक्तित्व को विकसित करती हैं, चाहे वह प्राथमिक स्तर की शिक्षा हो या उच्च स्तर की। यदि विद्यालयों में ही विद्यार्थी उचित ज्ञान की प्राप्ति नहीं कर पायेंगे तो वह अपना तथा देश का विकास ही नहीं कर पायेंगे। वे उच्च स्तर की शिक्षा तो प्राप्त कर सकेंगे परंतु वह सिर्फ डिग्री के लिए या नाममात्र की शिक्षा के लिए होगा। शोध-पत्र के अध्ययन का महत्व इस प्रकार है कि सरकारी, निजी विद्यालयों, महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में भाषा की विभेदकारी व्यवस्था को समाप्त करने पर विचार विमर्श किया जाना चाहिए तथा विश्वविद्यालयी शिक्षा में एकरूपता

लाई जानी चाहिए इससे दोनों माध्यमों के विद्यार्थियों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। दोनों ही माध्यमों के विद्यार्थी उचित ज्ञान की प्राप्ति कर जीवन में सफल होंगे। भाषा के आधार पर किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए। अतः प्रवेश परीक्षा में दोनों ही माध्यमों को वरीयता देनी चाहिए।

सामान्यतया भाषा-संबंधी विषय पर अलग-अलग नीतियों, आयोगों में शिक्षा के माध्यम की बात की गई है तथा समय-समय पर भाषा-संबंधी कार्यक्रम, नीतियां बनाई गई जिससे इस समस्या का समाधान संभव हो सके और विद्यार्थियों को किसी भी स्तर पर इस समस्या का सामना न करना पड़े तथा विद्यार्थी अपने ही माध्यम की सहायता से ज्ञान की प्राप्ति कर सकते हैं। इन सब के बावजूद भी यह समस्या अभी भी विकराल रूप लिए हुए हैं। भाषा के कारण यह दो माध्यमों (हिंदी माध्यम, अंग्रेजी माध्यम) में बंट चुका है, अर्थात् इनके मध्य एक खाई बन गई है। प्रस्तुत शोध में विभिन्न नीतियों, कार्यक्रमों, आयोगों के भाषा सम्बंधित सुझाव दिए गये हैं इसके बाद भी यह समस्या बनी हुई है। निर्देश के माध्यमों का विद्यार्थियों पर तथा उनकी शिक्षा पर क्या प्रभाव पड़ता है तथा वे किस प्रकार इस समस्या से deal करते हैं किन किन समस्याओं का सामना करते हैं? इसका पता लगाने के लिए यह शोध किया गया है यही इसका महत्व भी है कि विद्यार्थियों की समस्याओं का पता लगाकर हमारे नीति-नियंता इस समस्या पर विद्यार्थियों के अनुरूप विचार कर सकें और उन्हीं के अनुरूप नीतियों तथा कार्यक्रमों का निर्माण करें ताकि वह भी बिना किसी भाषायिक विवाद के शिक्षा को ग्रहण तथा अपने जीवन को सफल बना सके और देश के विकास, उत्थान और प्रगति में योगदान और सहयोग प्रदान कर सकें। हमारे नीति-नियंताओं को इस बात पर विचार विमर्श करने होंगे।

उद्देश्य-

उद्देश्य वे लक्षण होते हैं जिन्हें हम अपने अध्ययन से प्राप्त करते हैं। वह पाठक को यह बताते हैं कि शोधकर्ता शोध-कार्य के माध्यम से क्या सिद्ध करना चाहते हैं? उद्देश्यों के शब्दों में बहुत ही स्पष्टता, विशिष्टता व सटीकता होनी चाहिए। यह संख्यानुसार सूचीबद्ध किए जाते हैं। उद्देश्यों को लिखते समय कार्य उन्मूलन क्रियाओं/ क्रियाओं का प्रयोग किया जाता है। जैसे- पता लगाना, निर्धारण करना, मापना, स्पष्ट करना, अध्ययन करना, आदि।

प्रस्तुत शोध में तीन उद्देश्यों को शामिल किया गया है जो इस प्रकार हैं--

1. उच्च शिक्षा में निर्देश के माध्यमों (हिंदी माध्यम व अंग्रेजी माध्यम) की नीतियों का पता लगाना।
2. उच्च शिक्षा में निर्देश के माध्यमों (हिंदी माध्यम व अंग्रेजी माध्यम) से विद्यार्थियों को होने वाली समस्याओं का पता लगाना।
3. उच्च शिक्षा में निर्देश के माध्यमों का विद्यार्थियों की शिक्षा पर पड़ने वाले प्रभावों का पता लगाना।

उपकल्पनाएं

मानव स्वभाविक रूप से जिज्ञासु होते हैं। जब हम किसी घटना या तथ्यों का अवलोकन करते हैं तो मन में स्वाभाविक रूप से प्रश्न उठता है कि ऐसा क्यों हुआ, कैसे हुआ और ऐसा ही क्यों हुआ आदि? इसे ही समझने के लिए कुछ अप्रत्यक्ष तथ्यों का प्रयोग प्रत्यक्ष तथ्यों का पता लगाने के लिए किया जाता है। अप्रत्यक्ष तथ्यों को उपकल्पना, परिकल्पना या अभिकल्पना कहते हैं।

अनुसंधान की समस्या या लक्ष्य के अनुसार "किधर" चलाना है और "कैसे" चलना है, इसका पूर्व निर्धारण आवश्यक है अर्थात् शोधकर्ता अपने दिमाग में अनुसंधान की समस्या से संबंधित कुछ उपकल्पनाओं का निर्माण करता है जो कि एक प्रकार से शोध का निष्कर्ष होती हैं। उपकल्पना के आधार पर ही अनुसंधान की दिशा निर्धारित की जाती है। सरल भाषा में एक शोधकर्ता को समस्या के समाधान का पूर्व ज्ञान नहीं होता उसी समस्या के बारे में ज्ञात करने के लिए अनुमान लगाने को ही उपकल्पना कहते हैं। यह एक अस्थायी कथन होता है। उपकल्पना दो या दो से अधिक चरों के बीच परीक्षण योग्य (Testable) समाधान को कहते हैं अर्थात् उपकल्पना के चरों के मध्य संबंध सत्य है या असत्य। इससे शोध को एक दिशा मिलती है।

"बिना किसी प्रत्याशित विचार के हम यह नहीं जान पाते हैं कि हम किन तथ्यों की खोज कर रहे हैं और न ही यह समझ पाते हैं कि हमारी खोज हेतु क्या सार्थक और क्या निरर्थक है।"
'(एम. आर. कोहेन, 1930)'

"प्राकल्पना एक कामचलाऊ अनुमान है, जिसकी रचना इसके तार्किक अथवा अनुभवपरक परिणामों को निकालने और परीक्षण करने के लिए की जाती हैं।" '(वेबस्टर कोश, 1968)'

"प्राकल्पना एक अस्थायी समान्यीकरण है, जिसकी प्रमाणिकता का परीक्षण किया जाना बाकी है।" '(लुंडबर्ग, 1951)'

"प्राकल्पना परीक्षण की जाने वाले प्रस्थापना है।" '(बोगार्डस)'

इस प्रकार उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि उपकल्पना किसी वस्तु, घटना, व्यक्ति या दशाओं के बीच संबंधों को दर्शाता है। इस अंतर्संबंध का अनुभव के आधार पर परीक्षण किया जा सकता है। प्राकल्पना एक अस्थायी अनुमान है। प्रस्तुत शोध में तीन उपकल्पना को शामिल किया गया है जो इस प्रकार है--

1. उच्च शिक्षा में निर्देश के माध्यम (हिंदी, अंग्रेजी माध्यम) की नीतियों का विशेष प्रबंध है जिनमें कहीं न कहीं नकारात्मक दृष्टिकोण दिखाई देता है और जिनमें सुधार लाने की आवश्यकता है।
2. उच्च शिक्षा में निर्देश के माध्यमों (हिंदी, अंग्रेजी माध्यम) से विद्यार्थियों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है।
3. उच्च शिक्षा में निर्देश के माध्यमों (हिंदी, अंग्रेजी माध्यम) का विद्यार्थियों की शिक्षा पर पड़ने वाले प्रभावों के परिणाम अच्छे नहीं दिखाई देते हैं।

कार्यप्रणाली-- सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति वैज्ञानिक होने के कारण इसमें वैज्ञानिक पद्धतियों का उपयोग किया जाता है। सामाजिक अनुसंधान किसी विशेष उद्देश्यों से प्रेरित होता है। इन उद्देश्यों से हमें सामाजिक जीवन के बारे में उचित ज्ञान की प्राप्ति होती है। यह उचित ज्ञान तभी संभव है जब योजनाबद्ध, व्यवस्थित व वैज्ञानिक पद्धतियों के माध्यम से शोध किया गया हो। ऐसा इसलिए करना अनिवार्य है ताकि वह (शोधकर्ता) अपने शोध को वैज्ञानिकता की कसौटी पर खरा सिद्ध कर सके।

"जब विज्ञान की आधारभूत बातों को समाजशास्त्र के क्षेत्र में लागू किया जाता है उस विधि को method (विधि) या methodology (पद्धति) कहते हैं।" '(गुडे एवम् हॉट)'

"पद्धति विज्ञान द्वारा सिद्धांतों की प्रमाणिकता की जांच की जाती है इसमें कैसे के प्रश्न के उत्तर की खोज की जाती है।" (System of logic, 1898)

"Methodology का प्रयोग किसी विज्ञान के तार्किक आधार को ढूंढने के अर्थ में किया जाता है।" '(John Struall Mill)'

Mill ने सत्य की खोज संबंधी रीतियों एवं प्रमाणों की खोज पर बल दिया।

"कार्यप्रणाली आधारभूत तार्किक प्रक्रिया इसके द्वारा संकलित साक्ष्यों के आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते हैं।" '(गुडे वा हॉट)'

"यह वैज्ञानिक कार्यविधि का विश्लेषण है।" '(काफमैन, Methodology of Social Science, 1944)'

"व्यवस्थित शोध के सिद्धांत के रूप को कहते हैं।" '(जी ली मेकिने)'

अर्थात् शोध की संपूर्ण कार्य-प्रणाली को कार्यप्रणाली कहते हैं।

विविध प्रकार की घटनाओं का अध्ययन एक पद्धति से संभव नहीं है इसलिए अनेक पद्धतियों, रीतियों, विधियों तथा उपकरणों का प्रयोग शोध में किया जाता है। अतः यह शोध की विधियों का विज्ञान है। इन पद्धतियों, रीतियों तथा उपकरणों के माध्यम से ही तथ्यों को एकत्रित, वर्गीकृत, विश्लेषित तथा निष्कर्ष निकाले जाते हैं।

शोध-विधि को विभिन्न चरणों में प्रस्तुत किया गया है। शोध कार्य से संबंधित कुछ प्रमुख शोध-प्रविधिओं की सहायता ली गई है जो कि इस प्रकार है---

साक्षात्कार अनुसूची (Interview schedule)—

यह प्रविधि (तकनीकी--यह क्रियात्मकता पर जोर देती है अर्थात् तत्वों का संकलन कैसे किया जाए इस बात पर बल देती है? यह साक्ष्य (तथ्य) एकत्रित करने का एक विशिष्ट तरीका है। यह तथ्यों को संकलित व एकत्रित करने में सहायता प्रदान करती है अर्थात् यह वह साधन है जिसके माध्यम से साक्ष्य को एकत्रित किया जाता है) का एक उपकरण है। यह प्रश्नों की एक सूची या श्रंखला होती है जिसके आधार पर उपकल्पनाओं का प्रशिक्षण किया जाता है। प्रश्नावली और अनुसूची दोनों ही प्रश्न-उत्तर की तकनीकी पर आधारित विधियां हैं। प्रश्नावली को स्वयं सूचनादाता भरता है इसे स्वाभरित प्रश्नावली या डाक प्रश्नावली भी कहा जाता है।

इसमें संरक्षित प्रश्नों (structure questions-वह प्रश्नावली जिसमें प्रश्नों की भाषा, शब्द, वाक्यांश तथा क्रम का निर्धारण पूर्ण निश्चित होता है) की सूची होती है। जैसे- डाक प्रश्नावली, प्रश्नावली अनुसूची।

"एक प्रश्नावली को सामान्यतः डाक द्वारा भेजा जाता है या सूचनादाता को दे दिया जाता है जिसे उसे साक्षात्कारकर्ता की सहायता के बिना भरना होता है किंतु जिस उपकरण को प्रत्यक्षतः सूचनादाता को नहीं दिया जाता है उसे सामान्यतः अनुसूची तथा जिसे सूचनादाता से प्रश्न पूछकर साक्षात्कारकर्ता स्वयं भरता है, उसे सामान्यतः साक्षात्कार अनुसूची कहते हैं।" (के. डी. बैली, 1978)

साक्षात्कार--आमने-सामने की स्थिति में की गई बातचीत जिसके माध्यम से उत्तरदाता के माध्यम से साक्षात्कारकर्ता द्वारा एकत्रित करना ही साक्षात्कार कहलाता है।

"सूचना एकत्रित करने हेतु अन्वेषक तथा सूचनादाता के बीच होने वाले वार्तालाप को साक्षात्कार कहते हैं।" (Theodorsion and Theodorsion, 1970)

अनुसूची-- अनुसूची भी मूल रूप से प्रश्नावली का ही विशिष्ट रूप है जिसका प्रयोग प्रत्यक्ष साक्षात्कार (आमने-सामने की स्थिति) में किया जाता है इसमें साक्षात्कारकर्ता सूचनादाता से अनुसूची में लिखे प्रश्नों को पूछकर उनके उत्तर स्वयं भरता है ऐसी प्रश्नावली को सामान्यतया प्रश्नावली-अनुसूची के नाम से जानते हैं।

"सामान्यतः अनुसूची शब्द (Term) का प्रयोग प्रश्नों के एक ऐसे समूह के लिए किया जाता है जो साक्षात्कारकर्ता द्वारा दूसरे व्यक्ति से आमने-सामने की स्थिति में पूछे और उत्तर लिखे जाते हैं।" (गुडे एवम हट्ट)

"यह गणना की एक विधि है जिसका प्रयोग औपचारिक एवं मानकीकृत (Standardized) गवेषणाओं में विभिन्न प्रकार के परिमाणात्मक तथ्यों (Quantitative Facts) के संकलन हेतु किया जाता है।" (पी. वी. यंग)

अतः दोनों में रचना और बनावट की दृष्टि से काफी समानता है किंतु प्रयोग की दृष्टि से भिन्नता है। प्रश्नावली और अनुसूची दोनों में काफी समानताएं हैं क्योंकि दोनों में सभी उत्तरदाताओं के लिए एक से ही ढंग से निर्मित प्रश्न होते हैं जो किसी केंद्रीय समस्या या समस्याओं से तार्किक रूप से संबंधित होते हैं। इन दोनों में अंतर है कि प्रश्नावली को शोधकर्ता

उत्तरदाता से प्रश्न पूछकर स्वयं भरता है जबकि अनुसूची को उत्तरदाता द्वारा भरा जाता है। साधारणतः प्रश्नावली का प्रयोग शिक्षित सूचनादाताओं में किया जाता है जो प्रश्न को पढ़कर स्वयं उत्तर लिख सके। साक्षात्कार अनुसूची शिक्षित और अशिक्षित दोनों प्रकार की सूचनादाताओं के लिए तैयार की जा सकती हैं। प्रश्नावली और साक्षात्कार अनुसूची दोनों से प्राप्त सूचनाओं का वर्गीकरण और सारणीयन करके तथ्यों का सांख्यिकीय विश्लेषण किया जा सकता है।

प्रस्तुत शोध में प्रतिबंधित या बंद प्रश्न की सहायता ली गयी है। प्रस्तुत शोध में पूर्ण संचरित या प्रतिबंधित (बंद) प्रश्नों को शामिल किया गया है। यह निश्चित चुनाव वाले प्रश्न होते हैं जिनमें प्रश्नों के साथ सूचनादाता को कुछ संभावित वैकल्पिक उत्तर सुझाए जाते हैं। सूचनादाता को अपने विचारों से मिलते-जुलते उत्तर को चुनने के लिए कहा जाता है। इन्हें प्रतिबंधित या बंद प्रश्न इसलिए कहा जाता है क्योंकि इनमें सूचनादाता की प्रत्युत्तर के दायरे को वैकल्पिक उत्तरो द्वारा सीमित कर दिया जाता है। जैसे –हां, नहीं

शोध कार्य से संबंधित कुछ प्रमुख शोध-प्रविधिओं की सहायता ली गई है। तथ्यों को मुख्यतः दो विधि द्वारा प्राप्त किया जाता है—

1. प्राथमिक स्रोत
2. द्वितीयक स्रोत

प्राथमिक स्रोत- तथ्यों को मुख्यतः दो विधि द्वारा प्राप्त किया जाता है। यह तथ्य प्राप्त करने की एक विधि है। प्राथमिक तथ्य वे मौलिक सूचनाएं/आंकड़े होती हैं जिन्हें शोधकर्ता प्रथम बार field में जाकर संकलित व एकत्रित करता है इन्हें मुख्यतः प्रश्नावली, अनुसूची, साक्षात्कार तथा अप्रत्यक्ष निरीक्षण के माध्यम से प्राप्त किया जाता है। शोधकर्ता घटनाओं का आकलन स्वयं करता है और उन व्यक्तियों का उत्तरदाता के रूप में चुनाव करता है जिनके पास सूचनाएं होती हैं। यह विश्वसनीय व प्रमाणिक होती हैं। प्राथमिक स्रोत के आधार पर निर्मित प्रलेखीय सामग्री प्राथमिक प्रलेख/दस्तावेज (Primary Document) कहलाते हैं।

द्वितीयक स्रोत- यह वे सूचनाएं और आंकड़े होते हैं जो शोधकर्ता को आर्टिकल, समाचार-पत्र, डायरी, रिपोर्ट, प्रलेखों, जनमाध्यम द्वारा प्रचारित रिपोर्ट, सरकारी आलेखों के माध्यम से प्राप्त होते हैं। यह सूचनाएं व आंकड़े शोधकर्ता के न होकर किसी दूसरे व्यक्ति द्वारा एकत्रित व किसी संस्था के होते हैं। इन्हें शोधकर्ता अपने शोध के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उपयोग करता है।

"द्वितीयक स्रोत वे विद्यमान अथवा पूर्व संकलित दत्त है जिनका संकलन सामाजिक शोधकर्ता के किसी विशिष्ट उद्देश्य के लिए नहीं किया गया है।" (फरकेस तथा रिचर, 1973)

"यह द्वितीयक स्तर पर प्राप्त किए गए तथ्य होते हैं अर्थात् यह प्रथम बार संकलित किए गए तथ्य नहीं होते अपितु अन्य लोगों के द्वारा संकलित मूल तथ्यों के आधार पर निर्मित तथ्य होते हैं।" (मन्न)

"इन तथ्यों को प्रयोग करने वाले तथा प्रथम बार संकलित करने वाले लोग अलग-अलग होते हैं।" (यंग)

अतः यहां द्वितीयक स्रोत पर निर्मित प्रलय की सामग्री द्वितीयक प्रलेख (Secondary Document) कहलाते हैं।

इसप्रकार शोध-कार्य को पूर्ण करने के लिए कुछ प्रमुख शोध-प्रविधिओं की सहायता ली गई है।

"साक्षात्कार अनुसूची (प्रश्नों की एक सूची) के जरिए आंकड़ों का संकलन किया गया है जिसके आधार पर उपकल्पनाओं का प्रशिक्षण किया गया है। कुछ निदर्शनों का चुनाव करके शोध-संबंधी सूचनाओं एवं आंकड़ों को संकलित किया गया है। इसके अलावा प्रस्तुत शोध में प्राथमिक स्रोत (Field work) एवं द्वितीयक स्रोतों (books, net, articles, Newspapers, Journals etc) के द्वारा संबंधित आंकड़ों को एकत्रित किया गया है जिसके आधार पर ही शोध के लक्ष्यों को प्राप्त किया गया है।"

अध्ययन रेखा-चित्र /शोध अभिकल्प

अभिकल्प शब्द का अर्थ रुपरेखा बनाना या नियोजन करना या विवरण को व्यवस्थित करना होता है। शोध अभिकल्प अनुसंधान संचालन के लिए तथा लक्ष्यों को कैसे प्राप्त किया जाए इसकी योजना बनाता है? जैसे- क्या अवलोकन करना है, अवलोकन कैसे करना है, कब और कहां अवलोकन किया जाना है, अवलोकन की व्याख्या तथा विश्लेषण कैसे की जानी है आदि?

अतः हम यह कह सकते हैं कि अनुसंधान की अभिकल्पना और प्रक्रिया नियंत्रित वैज्ञानिक जांच से संबंध होती है। किसी भी कार्य को दो प्रकार से संपादित किया जा सकता है--

1. अनियोजित
2. नियोजित

अनियोजित या अनियोजन से तात्पर्य अव्यवस्थित रूप से कार्य करने से हैं। इसमें कार्य करने की कोई सुनिश्चित रूपरेखा या प्रक्रिया नहीं अपनाई जाती है और कार्य के लक्ष्य, उद्देश्य, साधन और विधि आदि पर बिना विचार-विमर्श किए तत्काल में कार्य शुरू कर दिया जाता है। ऐसी स्थिति में हम अपने लक्ष्य को नहीं प्राप्त कर सकते हैं। इसके विपरीत नियोजन या नियोजित से तात्पर्य कार्य करने की एक सुनिश्चित व्यवस्था और प्रक्रिया से है। जिसमें कार्य को शुरू करने से पूर्व उसके उद्देश्य, लक्ष्य, प्रयोजन, साधन और कार्यविधि पर सोच विचार करके उसकी एक रूपरेखा तैयार की जाती है। तत्पश्चात् कार्य की शुरुआत की जाती है ताकि कार्य के बीच में कोई बाधा उत्पन्न न हो और न ही कार्य को बीच में बन्द करना पड़े। कार्य करने का यह नियोजित तरीका ही हमें हमारे लक्ष्य प्राप्ति की ओर ले जाता है। विज्ञान के क्षेत्र में शोध कार्य करने के इसी तरीके को अपनाया जाता है जिसे शोध अभिकल्पके नाम से जानते हैं।

R. L. Acoff ने 'सामाजिक शोध का अभिकल्प (1963) में सबसे पहले अभिकल्प की बात की। उनके अनुसार—“अनुसंधान प्रयत्नों के निर्माण से संबंधित विभिन्न चरणों और प्रक्रियाओं की योजना बनाना है।” उन्होंने अपने अध्ययन बताया कि-- "एक सुविचारित निर्णयों की एक ऐसी प्रक्रिया है जिनका शोध के दौरान कार्यान्वयन किया जाना है ताकि कोई अप्रत्याशित स्थिति उत्पन्न होने के पूर्व ही उसे नियंत्रित किया जा सके।" एक शोध अभिकल्प किसी भी शोध परियोजना (Research Project) की एक तार्किक, व्यवस्थित एवम् विस्तृत रूपरेखा (Detailed outline) या कार्य योजना है जो यह बताती है कि शोध कार्य को कैसे किया जाएगा ?

किसी विषय पर शोध करने से पूर्व उस विषय की रूपरेखा तैयार करना ही रिसर्च डिजाइन कहलाता है। इसे सामान्य भाषा में शोध कार्य का नक्शा (Blue Print) भी कहते हैं। ऐसा इसलिए किया जाता है ताकि शोध कार्य में आने वाली कठिनाइयों तथा बाधाओं का पहले से ही अनुमान लगाया जा सके तथा उनका निवारण करने के साथ-साथ लागत, व्यय, सामग्री, अनुमानित संख्या, उपकरण तथा तकनीकी तथा समय के बारे में विचार किया जा सके, ताकि शोध कार्य को सफलतापूर्वक संपन्न किया जा सके। इसका उद्देश्य शोध को एक निश्चित दिशा देना होता है।

“शोध अभिकल्प तथ्यों के संकलन परिमापन तथा विश्लेषण हेतु बनाया गया एक नक्शा (blueprint) होता है।” “(बी.एस. फिलिप्स, 1966)”

"एक शोध अभिकल्प एक ऐसी योजना है जो यह बताती है कि तथ्यों का संकलन व विश्लेषण कैसे किया जाएगा?" "(किर्क,1968)"

"अनुसंधान की एक तार्किक एवम् व्यवस्थित योजना तथा उसका निर्देशन होती है।" "(पी. वी. यंग,1977)"

"शोध अभिकल्प शोध की एक योजना, एक संरचना तथा व्यूह रचना होती है, जिसके द्वारा अनुसंधान के प्रश्नों के उत्तर तथा उनके प्रसरण को नियंत्रित किया जाता है।" '(एफ. एन. कार्लिंगर)'

"वांछित जानकारी के संग्रहण और विश्लेषण के लिए विधियों व प्रक्रिया को बताने वाला मास्टर प्लान है।" '(जिक्मंड,1988)'

तथ्यों के संकलन की विधि क्या होगी उसकी विश्वसनीयता का मापन कैसे की जाएगी तथा उनके विश्लेषण के लिए कौन सा तरीका (गुणात्मक,मात्रात्मक) अपनाया जाए इसके लिए ब्लूप्रिंट तैयार किया जाता है? यह शोध कार्य की तार्किक रणनीति होती है ताकि शोध कार्य आसानी से हो सके। इसमें तथ्य संकलन की विधियों तथा उपकरणों पर जोर दिया जाता है जिसके माध्यम से शोध के उद्देश्य को प्राप्त किया जाता है। यह एक निश्चित प्रक्रिया है नियोजन का अर्थ किसी कार्य को करने से पूर्व उसके लक्ष्य एवं साधनों का निर्धारण करना होता है। यह नियोजन कार्यक्षमता को बढ़ा देता है। इसे अनुसंधान की व्यूह रचना (Research strategy) भी कहते हैं। यह क्या और कैसे का उत्तर जानने के लिए बनाई जाती है अर्थात् शोध कैसे की किया जाए, कौन से तथ्यों को कब और कैसे संकलित किया जाए इस बात पर बल देती है? प्रत्येक विषय की अपनी एक विषयवस्तु होती है। जिसका अध्ययन करने के लिए विशिष्ट विधियों, पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है जो इस प्रकार है....

मात्रात्मक विधि-- इस विधि में सामाजिक तथ्यों का वर्णन संख्याओं के रूप में किया जाता है अर्थात् जो विधियां संख्याओं एवं माप को महत्व देती हैं मात्रात्मक विधि कहलाती है। यह सामाजिक अनुसंधान की वह विधि है जिसमें घटनाओं को संख्यात्मक दृष्टि से मापा जाता है। इस विधि में विचार, मत एवं भावनाओं को मापने का प्रयास किया जाता है। इस विधि को परिमाणात्मक तथा संख्यात्मक विधि भी कहते हैं।

"विस्तृत अर्थ में वैज्ञानिक पद्धतियों, तथ्यों का व्यवस्थित अवलोकन, वर्गीकरण एवं निर्णयन है।" '(लुंडबर्ग)'

उपरोक्त परिभाषा से हम यह कह सकते हैं कि परिमाणात्मक विधि द्वारा तथ्यों की गणना का कार्य किया जाता है तथा उन्हें व्यवस्थित किया जाता है। उन Variables की माप की जाती है जिन्हें गिना या संख्याओं के रूप में दर्शाया जाता है।

गुणात्मक विधि-- इसमें सामाजिक घटनाओं का अध्ययन उनके गुणों के आधार पर किया जाता है। इस विधि में तर्कशास्त्र का सहारा लिया जाता है। इस विधि में आगमन (सामान्य से विशिष्ट) तथा निगमन (विशिष्ट से सामान्य) विधियों का प्रयोग किया जाता है। गुणात्मक शोध में सटीकता और सूक्ष्मता की कमी होती है। ऐसे चरों की माप करता है जिन्हें संख्याओं में नहीं दर्शाया जा सकता अर्थात् जिनकी माप न की जा सके। जैसे- सुख-दुःख, अंधविश्वास, घटना, व्यवहार आदि।

मात्रात्मक तथा गुणात्मक विधि में अंतर—

1. मात्रात्मक अनुसंधान में परिकल्पनाएं अध्ययन के पूर्व बनाई जाती हैं जबकि गुणात्मक विधि में उपकल्पनाएं या तो अध्ययन के दौरान या अध्ययन के बाद प्रतिपादित की जाती हैं।
2. मात्रात्मक अनुसंधान में अवधारणाओं को परिचालित किया जाता है जबकि गुणात्मक अनुसंधान में अवधारणाओं को केवल संवेदनात्मक बनाया जाता है।
3. मात्रात्मक अनुसंधान, अनुसंधान अभिकल्पन में अभिकल्प आदेशात्मक होता है जबकि गुणात्मक अनुसंधान में अभिकल्प आदेशात्मक नहीं होता है।
4. मात्रात्मक अनुसंधान में प्रतिदर्श का नियोजन आधार सामग्री संग्रह की पूर्व किया जाता है जबकि गुणात्मक अनुसंधान में यह आधार सामग्री संग्रह के दौरान किया जाता है।
5. मात्रात्मक अनुसंधान में प्रतिदर्श प्रतिनिधि होता है जबकि गुणात्मक अनुसंधान में ऐसा नहीं होता है।
6. मात्रात्मक अनुसंधान में सभी प्रकार के मापन, स्केल्स का प्रयोग किया जाता है जबकि गुणात्मक अनुसंधान में अधिकतर साधारण मापन ही प्रयोग होते हैं।
7. मात्रात्मक अनुसंधान में बड़े अनुसंधान में आधार सामग्री संग्रह करने के लिए साधारण अन्वेषक रखे जाते हैं जबकि गुणात्मक अनुसंधान में अनुसंधानकर्ता अकेले ही साधारण सामग्री का विश्लेषण कर लेते हैं।
8. मात्रात्मक अनुसंधान में आमतौर पर आगमन सामान्यीकरण का प्रयोग किया जाता है जबकि गुणात्मक अनुसंधान में विश्लेषणात्मक सामान्यीकरण किए जाते हैं।

9. इसमें रिपोर्टिंग में निष्कर्ष अधिक संकलित होते हैं जबकि गुणात्मक अनुसंधान में ऐसा नहीं होता है।

अतः इसप्रकार “प्रस्तुत अध्ययन रेखा-चित्र में मात्रात्मक एवं गुणात्मक अनुसंधान (मिश्रित अनुसन्धान रिसर्च) का प्रयोग किया गया है।”

अध्ययन-क्षेत्र

यह अनुसंधान का मुख्य चरण है। शोध की वास्तविक शुरुआत यहीं से होती है। तथ्यों का संकलन शोधकर्ता क्षेत्र में जाकर करता है। यह शोध के उद्देश्य क्षेत्र और आकार पर निर्भर करता है। शोध की योजना बनाते समय शोध के क्षेत्र तथा अध्ययन की इकाइयों के बारे में भी विचार-विमर्श किया जाता है कि शोध का क्षेत्र क्या होगा तथा उस शोध की समस्त इकाइयों का अध्ययन किया जाता है या समस्त में से कुछ इकाइयों का अध्ययन किया जाता है?

प्रस्तुत अध्ययन “लखनऊ जिले के बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर केंद्रीय विश्वविद्यालय” में किया गया है। यह विश्वविद्यालय रायबरेली मार्ग पर स्थित है। यह विश्वविद्यालय 250 एकड़ में फैला हुआ है। विश्वविद्यालय की स्थापना 10 जनवरी, 1996 को हुई थी। इस विश्वविद्यालय में एक केंद्रीय पुस्तकालय भी है जिसका नाम गौतमबुद्ध केंद्रीय पुस्तकालय रखा गया है। विश्वविद्यालय में तीन पुरुष छात्रावास (Boys Hostel) तथा तीन महिला छात्रावास (Girls Hostel) हैं। इस विश्वविद्यालय का एक उपरिग्रह परिसर भी है जो अमेठी में है। यह उपरिग्रह परिसर 2016 में स्थापित किया गया था। इस विश्वविद्यालय में 15 School हैं। इन स्कूलों में 40+ विभाग है तथा इन विभागों में शिक्षा को सुचारू रूप से संचालित किया जाता है। इन विभागों में 4000 से ज्यादा विद्यार्थी उच्च शिक्षा ग्रहण करते है।

बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय में पढ़ने वाले विद्यार्थियों के लिए निर्देश के माध्यम (हिंदी/अंग्रेजी माध्यम) से होने वाली समस्याएं क्या-क्या है तथा वह इन समस्याओं का किस प्रकार सामना करते हुए आगे बढ़ते हैं और समस्याओं का निवारण करते हैं? इसका पता लगाने के लिए इस क्षेत्र को अध्ययन क्षेत्र के लिए चुना गया है।

प्रतिदर्श विधि

शोध की योजना बनाते समय शोध के क्षेत्र तथा अध्ययन की इकाइयों के बारे में भी सोच-विचार किया जाता है कि शोध का क्षेत्र क्या होगा और किन क्षेत्र की समस्त इकाइयों का

अध्ययन किया जाएगा या उनमें से कुछ सीमित इकाइयों को चुनकर ही उनका अध्ययन किया जाएगा? इन समस्त इकाइयों का अध्ययन वैज्ञानिक शोध में दो प्रकार की विधियों द्वारा किया जाता है--

1. संगणना विधि 2. प्रतिचयन विधि

प्रस्तुत शोध के अध्ययन में प्रतिचयन विधि का प्रयोग किया गया है।

प्रतिचयन विधि--- प्रतिचयन विधि में शोध क्षेत्र की कुछ प्रतिनिधियों इकाइयों का चयन करके उन चयनित इकाइयों का ही अध्ययन किया जाता है।

"किसी पूर्ण निश्चित योजना के अनुसार इकाइयों के समूह में से एक निश्चित प्रतिशत का चुनाव करना प्रतिचयन कहलाता है।" '(बोगार्ड्स, 1954)'

"एक विशिष्ट समग्र (Universe) में से एक निश्चित संख्या में व्यक्तियों, प्रकरणों या घटना के चयन की प्रक्रिया को प्रतिदर्श कहते हैं।" '(पार्टेन, 1950)'

"प्रतिदर्श एक विशाल समूह का एक लघुतर प्रतिनिधि है।" '(गुडे एवं हॉट, 1952)'

"निदर्शन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक विशिष्ट समग्र में से निश्चित संख्या में व्यक्तियों, विषयों व निरीक्षणों को निकाला जाता है।" '(फेयरचाइल्ड)'

"एक प्रतिदर्श जनसंख्या का वह भाग है जिसका अध्ययन इसलिए किया जाता है ताकि संपूर्ण जनसंख्या के बारे में कुछ अनुमान लगाया जा सके।" '(मानहीम 1977)'

अर्थात् हम यह कह सकते हैं कि किसी भी शोध हेतु एक संपूर्ण समूह में से एक भाग या अंश का चुनाव करना ही प्रतिदर्श कहलाता है।

दो प्रकार के प्रतिदर्श होते हैं—1. सम्भावना प्रतिदर्श 2. गैर-सम्भावना प्रतिदर्श

सम्भावना प्रतिदर्श-- प्रस्तुत शोध में सम्भावना प्रतिदर्श का प्रयोग किया गया है। प्रतिदर्श में चयन किए जाने के संयोग (chance) को संभाव्यता कहा जाता है। इस प्रकार के चयन की यह विशेषता है कि इसमें समग्र की प्रत्येक इकाई को चुने जाने की संभावना बराबर रहती है। संभावनामूलक में समान संभावना या संयोग को महत्व दिया जाता है। इस निदर्शन में पक्षपात रहित व समग्र की प्रत्येक इकाई को समान अवसर दिया जाता है। साथ ही इसमें सर्वाधिक प्रतिनिधिकता पाई जाती है जो एक अच्छे प्रदर्शन की पहली शर्त है।

जैसे- Random Sampling

“ब्लैक एंड चैंपियन, 1976” संभावनामूलक प्रतिचयन के प्रयोग की निम्न शर्तें बताई है---

1. अध्ययन क्षेत्र के व्यक्तियों की पूर्ण सूची की उपलब्धता।
2. समग्र की उपयुक्त परिभाषा और उसके आकार का पूर्व ज्ञान।
3. अपेक्षित प्रतिदर्श की मात्रा की निश्चितता।
4. समग्र के प्रत्येक इकाई को चुने जाने का सामान और अवसर।

Systemetic Random Sampling

“बाउले ने 1915” में सर्वप्रथम सामाजिक सर्वेक्षण में इस विधि Random Sampling Method का प्रयोग किया। यह सम्भावना प्रतिदर्श का भाग है। साधारणतया दैव प्रतिचयन में समग्र की प्रत्येक इकाई को प्रतिदर्श में सम्मिलित होने का सामान और स्वतंत्र अवसर प्राप्त होता है। इस विधि में समभाव्य प्रतिचयन के सभी गुण होते हैं। यह एक सरल विधि है जिसे आसानी से समझा और प्रयुक्त किया जा सकता है। इसमें अभिनति (Bias) के उत्पन्न होने की संभावना अन्य विधियों की अपेक्षा कम रहती है। इस विधि में प्रतिदर्श त्रुटि की मात्रा बहुत कम होती है तथा इसका परिकलन (Calculation) भी सरल होता है। इसमें सर्वप्रथम जनसमूह की संख्या के आधार पर प्रतिदर्श का अनुपातिक आकर निश्चित किया जाता है तथा इकाइयों की सूची निश्चित की जाती है इसमें इकाई का चुनाव एक पूर्ण निश्चित व्यवस्था के अनुसार किया जाता है। इस प्रतिदर्शन में पूर्व निर्धारित व्यक्तियों की सूची में से प्रत्येक वे व्यक्ति लेकर घटकों को एकत्र करना होता है। सरल शब्दों में-- प्रथम उत्तरदाता को यादृच्छ रूप से चुना जाता है और फिर प्रत्येक वे व्यक्ति को चुना जाता है। यह प्रयोग में आसान और सरल होता है।

“व्यवस्थित प्रतिदर्शन में प्रतिदर्श इकाइयों का चयन पूर्ववर्ती इकाई के चयन पर निर्भर होता है।” (मेजर तथा काल्टन, 1971:83)'

“यह समस्त प्रणाली हमारे स्वयं के पूर्वाग्रहों और अभिनतियों से मुक्त होने के कारण एक वस्तुपरक विधि है।” (कार्लिगर)'

अतः हम यह कर सकते हैं कि यह एक सरल, सुविधाजनक, निष्पक्ष, वस्तुपरक और प्रतिनिधिक प्रतिचयन विधि है।

“प्रस्तुत अध्ययन लखनऊ जिले के बाबासाहब भीमराव अंबेडकर केंद्रीय विश्वविद्यालय के विभिन्न विभागों के विद्यार्थियों के चयन के लिए Probability Sampling के Systematic Random Sampling Method (व्यवस्थित यादृच्छिक नमूना विधि) विधि का प्रयोग किया गया है।”

प्रतिदर्श आकार---

किसी भी शोध में प्रतिदर्श का आकार या मात्रा क्या होनी चाहिए? यह एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रासंगिक प्रश्न है और इसका निश्चित उत्तर देना बड़ा कठिन है कि प्रतिदर्श में कितने व्यक्ति रखे जाने चाहिए अर्थात् प्रतिनिधि होने के लिए प्रतिदर्श कितना बड़ा या कितना छोटा होना चाहिए? जैसे-- कुछ लोगों का मानना है कि सबसे सामान्य आकार समग्र का दसवां भाग है तथा कुछ कहते हैं कि सांख्यिकी निष्कर्ष निकालने के लिए कम से कम 100 व्यक्ति आवश्यक है। सामाजिक शोध के संदर्भ में प्रतिदर्श के आकार/मात्रा का निर्धारण और भी कठिन होता है क्योंकि एक विषय को प्रभावित करने वाले कई कारक/चर होते हैं। एक लघु प्रतिनिधिक प्रतिचयन का प्रयोग कर हम प्रतिदर्श की मात्रा का निर्धारण कर सकते हैं। प्रतिदर्श न तो बहुत छोटा न बहुत बड़ा होना चाहिए। प्रतिदर्श के छोटा होने से उसकी प्रतिनिधित्वता ही समाप्त हो जाएगी जबकि प्रतिदर्श इतना बड़ा नहीं होना चाहिए कि वह पूरा समग्र ही बन जाए और प्रतिदर्श के प्रमुख गुण कम समय, कम लागत खर्च, और कम श्रम का लोप हो जाए अर्थात् 80% के प्रतिदर्श की कोई महत्ता नहीं होती है।

बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर केंद्रीय विश्वविद्यालय में 15 School हैं। इन स्कूलों में 40 से अधिक विभाग हैं। जैसे- साइंस (अंग्रेजी माध्यम), आर्ट्स (हिंदी, अंग्रेजी माध्यम), कॉमर्स (अंग्रेजी माध्यम), इंजिनियरिंग (अंग्रेजी माध्यम) आदि। इन विभागों में 4000 से अधिक विद्यार्थी पढ़ते हैं। प्रस्तुत अध्ययन में विभिन्न विभागों के 80 विद्यार्थियों को प्रतिदर्श-आकार में शामिल किया गया है। जिनमें से 40 छात्राओं तथा 40 छात्रों को प्रतिदर्श के आकार के रूप में चुना गया है। साइंस, इंजिनियरिंग, ह्यूमैनिटीज और कॉमर्स स्टीम के कुछ छात्र-छात्राओं को शामिल किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में चयनित विभागों (14) के school के डीन्स, विभागों के प्रोफेसर्स तथा विभागाध्यक्षो/विभागाध्यक्षाओं को भी प्रतिदर्श-आकार के रूप में शामिल किया गया है जिनकी कुल संख्या 24 है।

इस प्रकार प्रतिदर्श-आकार की सहायता से तथ्यों को एकत्रित व शोध को सुचारू रूप से संचालित किया गया है।

आंकड़ा संग्रहण की विधि एवम् विश्लेषण

यह अनुसंधान का मुख्य चरण है। शोध की वास्तविक शुरुआत यहीं से शुरू होती है। तथ्यों का संकलन शोधकर्ता क्षेत्र में जाकर करता है। यह शोध के उद्देश्य क्षेत्र और आकार पर निर्भर करता है। किसी भी शोध कार्य में तथ्यों के संकलन करने मात्र से ही शोध कार्य की इतिश्री नहीं हो जाती अपितु यह तो शोध कार्य की वास्तविक शुरुआत है। तथ्यों और समंको को एकत्रित करने से भी अधिक महत्वपूर्ण उनका विश्लेषण तथा व्याख्या करना होता है जिसके आधार पर शोध के अंतिम निष्कर्ष प्राप्त किए जाते हैं। संकलित तथ्यों का कोई महत्व नहीं होता है। यह प्रायः निर्जीव होते हैं। विश्लेषण और व्याख्या के द्वारा ही शोधकर्ता इन निर्जीव तत्वों में प्राण प्रतिष्ठा कर उन्हें सजीव बनाता है अर्थात् उन्हें एक अर्थ प्रदान करता है। तथ्यों के आपसी संबंधों को उजागर करने तथा तुलना करने के लिए शोधकर्ता उन्हें वर्गीकृत पर समूहीकृत करता है। वह ऐसा इसलिए करता है ताकि शोध के सामान्य निष्कर्षों तक पहुंचने में सफल हो सके। किसी भी उपकल्पना की स्वीकृति अथवा अस्वीकृति इसी बात पर निर्भर करती है कि उसके संबंध में कितने साक्ष्य उपलब्ध है। तथ्यों के विश्लेषण की विधियों का प्रमुख उद्देश्य यही होता है कि वह संकलित तथ्यों को साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत करें तथा संदेह होने पर उन तथ्यों का परीक्षण कर सके। विश्लेषण की विधियों के प्रयोग द्वारा ही वैज्ञानिक संकलित तथ्यों की वास्तविक प्रकृति के संबंध में निर्णय कर पाता है। शोधकर्ता द्वारा एकत्रित डेटा एक Raw material (कच्ची सामग्री) की भांति होता है। इन्हीं कच्ची सामग्रियों को अर्थपूर्ण बनाने के लिए तथ्य सामग्री को एक-दूसरे के साथ संबंध स्थापित कर किसी सैद्धांतिक ढांचे में डाला जाता है।

"जिस प्रकार किसी मकान का निर्माण पत्थरों से होता है उसी प्रकार विज्ञान की रचना तथ्यों से होती है किंतु तथ्यों के संकलन मात्र को उसी रूप में विज्ञान नहीं कहा जाता जिस प्रकार पत्थरों के ढेर को मकान नहीं कहा जा सकता।" '(पाइनकेयर)'

"पी. वी. यंग ने तथ्यों के विश्लेषण को शोध का सृजनात्मक पक्ष कहा उनके अनुसार तथ्य स्वयं कुछ नहीं कहते वे मूक होते हैं उन्हें व्यवस्थित विश्लेषण द्वारा मुखरित किया जाता है।" '(पी.वी. यंग, 1977)'

"विश्लेषण का तात्पर्य शोध प्रश्नों के उत्तर को प्राप्त करने के लिए तथ्यों का वर्गीकरण, क्रमबद्ध करना, समन्वयक तथा संक्षिप्तीकरण है। विश्लेषण का उद्देश्य तथ्यों को बोधगम्य तथा

व्याख्या योग्य बनाना है ताकि शोध समस्याओं के संबंधों का अध्ययन एवं जांच की जा सके।" (कार्लिंगर)

अतः हम कह सकते हैं कि तथ्यों का विश्लेषण तथा उनकी व्याख्या वैज्ञानिक शोध की आधारभूत आवश्यकता है जिसके द्वारा तथ्यों को व्यवस्थित करके एक आकार प्रदान किया जाता है।

यह प्रक्रिया तीन चरणों में पूरी होती है....

1. तथ्यों का संपादन (Editing of data)
2. तथ्यों का संकेतन (Coding of data)
3. वर्गीकरण और सारणीयन (Classification & Tabulation)

1. तथ्यों का संपादन

संपादन का अर्थ सूक्ष्म तथा सफलतापूर्वक सामग्री का अनुवीक्षण (minute and careful examination of data) करना है। अनुवीक्षण का उद्देश्य तथ्यों में रह गई अशुद्धियों में सुधार तथा कमियों को पूरा करना है ताकि यथार्थ निष्कर्ष निकाला जा सके। जिस प्रकार किसी अखबार का संपादक किसी रचना को छापने से पहले उसमें आवश्यक काट-छांट अशुद्धियों में सुधार तथा रचना को अद्यतन बनाने का प्रयास करता है ठीक उसी प्रकार एक शोधकर्ता संकलित सामग्री के आधार पर निष्कर्ष निकालने के लिए अशुद्धियों व त्रुटियों की विधिवत जांच करके उनमें आवश्यक संशोधन करता है। इसे ही तथ्यों का संपादन कहते हैं।

2. तथ्यों का संकेतन

संकेतीकरण का अर्थ उत्तरों को संख्यात्मक मूल्यों में बदलना या आधार सामग्री के विश्लेषण में प्रयोग किए जाने के लिए एक चर के विभिन्न वर्गों को संख्या प्रदान करना होता है। संकेतीकरण आमतौर पर प्रश्न तैयार करते समय प्रश्नावली, साक्षात्कार सूची को अंतिम रूप देने के पूर्व तैयार किया जाता है। इस प्रकार क्षेत्र कार्य पूर्व में संकेत किए गए प्रश्नों के साथ किया जाता है। संकेतीकरण का कार्य संकेत पुस्तक, संकेत सीट और कंप्यूटर कार्ड के प्रयोग से किया जाता है। संकेत पुस्तक यह व्याख्या करती है की प्रश्नावली/सूची में प्राप्त उत्तर वर्गों को किस प्रकार संख्यात्मक संकेत दिए जाए।

"संकेतीकरण वर्गीकरण की प्रक्रिया का एक भाग है। संकेतन द्वारा कच्ची सामग्री को संकेतों में व अंको में बदला जाता है ताकि आसानी से उनकी गणना या सारणीयन की जा सके।" ' (सैलिज)

"संकेतन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा तथ्यों को वर्गों में व्यवस्थित किया जाता है तथा प्रत्येक तथ्य को उसके वर्गानुसार एक संख्या या संकेत प्रदान किया जाता है। इस प्रकार संकेतों की गणना के द्वारा हमें किसी वर्ग में तथ्यों की कुल संख्या का पता चल जाता है।" ' (गुडे एवम् हट्ट)

3. वर्गीकरण और सारणीयन

संपादन इससे यह निश्चित हो जाता है कि सूची में प्राप्त जो जानकारी है वह शुद्ध है और उसका वर्गीकरण एक उपयुक्त रूप से किया जा चुका है। इसके बाद आधार सामग्री को कुछ सारणियों में एक साथ रखा जाता है और अन्य प्रकार के सांख्यिकी विश्लेषण भी किए जा सकते हैं। सारणी हाथों और कंप्यूटर द्वारा तैयार की जाती है।

वर्गीकरण-- तथ्यों को अर्थ पूर्ण समूहों में विभाजित करने की प्रक्रिया को वर्गीकरण कहते हैं। यह विभाजन तथ्यों को समानता और विभिन्नता के आधार पर किया जाता है अर्थात् सामान तथ्यों को एक समूह में तथा विभिन्न तथ्यों को उनके समानता के आधार पर अन्य समूह में रखा जाता है। तथ्यों का वर्गीकरण किसी भी प्रकार के वैज्ञानिक विश्लेषण का मुख्य आधार है। तथ्यों के संपादन के बाद विश्लेषण के लिए तथ्यों का वर्गीकरण किया जाना आवश्यक है। वर्गीकरण की प्रक्रिया के द्वारा सामग्री की विशाल मात्रा को संक्षिप्त करने का प्रयास किया जाता है ताकि सामग्री की विशिष्ट प्रकृति स्पष्ट रूप से दिखाई दे सके। इसकी सहायता से शोध सामग्री की आवश्यक सामग्री को व्यवस्थित आकार प्रदान किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य अनेक व्यक्तियों द्वारा दिए गए उत्तरों को कम से कम समूहों में वर्गीकृत करके उन्हें सरल बनाना होता है।

"तथ्यों का वर्गीकरण किसी भी प्रकार के वैज्ञानिक विश्लेषण का मुख्य आधार है।" ' (काल्विन स्मिद)

"वर्गीकरण तथ्यों (वास्तविक और कल्पित) को उनकी समानता और सादृश्यताओं के आधार पर समूहों तथा वर्गों में क्रमबद्ध करने की एक प्रक्रिया है जिससे व्यक्तिगत इकाइयों की विविधता के मध्य पाए जाने वाले गुणों की एकता व्यक्त हो जाती है।" ' (कोत्रौर)

"वर्गीकरण विभाजन का दूसरा नाम है अर्थात् एक विभाजन अथवा उप विभाजन को ही एक वर्ग कहते हैं।" '(कार्लिंगर)'

सारणीयन-- संपादन तथा वर्गीकरण की प्रक्रियाओं द्वारा यह निश्चित किया जाता है कि व्यक्तिगत प्रश्न तालिकाओं (प्रश्नावलियों) से जो सूचनाएं प्राप्त होती हैं वे सही है तथा उन्हें सही तरह से वर्गीकृत कर लिया गया है। इसके बाद सभी प्रश्न तालिकाओं के उत्तर से यह मालूम किया जाता है कि कितने सूचनादाताओं ने प्रश्न का उत्तर हां अथवा ना में दिया है। गणना की यह प्रक्रिया ही सारणीयन कहलाती हैं। किसी भी शोध में सारणीयन वर्गीकरण के बाद किया जाता है। वर्गीकरण के बिना तथ्यों का सारणीयन करना असंभव है। सारणीयन को Column और Row में दर्शाया जाता है। तथ्यों को क्रमबद्ध करने की यह प्रक्रिया ही सारणीयन/सारणीकरण कहलाती है।

"सारणीयन में मुख्य कार्य गणना ही है ताकि इसके आधार पर यह निर्धारित किया जा सके कि विभिन्न वर्गों में व्यक्तिगत सूचनाओं की संख्या कितनी है।" '(सैलिज)'

"सारणीयन किसी विचाराधीन समस्या को स्पष्ट करने के उद्देश्य से किया जाने वाला सांख्यिकी तथ्यों का क्रमबद्ध व सुव्यवस्थित प्रस्तुतीकरण है।" '(कोन्नोर)'

"सारणीयन वर्गीकृत आंकड़ों को सारणी के रूप में संक्षिप्त करने की प्रविधि है ताकि आंकड़ों को सुगमता से समझा जा सके और उसके आधार पर तुलना की जा सके।" '(ग्रेगरी एवं वार्ड)'

यह आंकड़ों के संकलन और विश्लेषण के बीच की एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। तथ्यों के संकलन के आधार पर ही कारण और प्रभाव की स्थापना की जाती है। इन्हीं संकलित तथ्यों के आधार पर ही भविष्यवाणी (prediction) की जाती है न कि कल्पनाओं के आधार पर। अनुसंधान की समस्या के अनुसार डाटा कलेक्शन के लिए उपयुक्त उपकरण का चुनाव किया जाता है। सर्वेक्षण की विस्तृत योजना बनाने के बाद उपयुक्त विधि द्वारा डाटा को संकलित किया जाता है जैसे- प्रश्नावली, साक्षात्कार अनुसूची, अवलोकन अनुसूची, पैमाना द्वारा डाटा एकत्रित करना। डाटा का सही संकलन ही डाटा का विश्लेषण व निर्वचन के लिए आधार बनता है।

सामाजिक सर्वेक्षण

सर्वेक्षण का प्रयोग समाज की असामान्य दशाओं (सामाजिक समस्याओं) के साथ-साथ सामान्य दशाओं (समाज की संरचना, प्रकृति, परिवर्तन, मूल्यों, विचारों, कार्यकारण संबंधों

आदि) के अध्ययन के लिए किया जाता है। सामाजिक सर्वेक्षण को सामाजिक शोध की एक ऐसी पद्धति माना जाता है जिसका प्रयोग विशुद्ध शोध और व्यवहारिक शोध के लिए किया जाता है। सामाजिक सर्वेक्षण का उद्भव सामाजिक सुधार, उन्नति और कल्याण की भावनाओं के उद्देश्य से प्रेरित था। सर्वेक्षण कौन, कैसे और क्यों जैसे प्रश्नों के उत्तर पाने के लिए किए जाते हैं?

"किसी एक समुदाय के संपूर्ण जीवन के किसी एक पक्ष का व्यवस्थित तथा तथ्यपूर्ण विश्लेषण करना ही सामाजिक सर्वेक्षण कहलाता है। जैसे- स्वास्थ्य, शिक्षा, मनोरंजन, निर्धनता आदि।" (फेयरचाइल्ड, Dictionary of sociology)

"किसी सर्वेक्षण की योजना, संगठन तथा उसका संचालन किसी व्यापार चलाने के समान है। दोनों के लिए विशेष लगन, चतुराई, प्रबंधन और विशेष अनुभव या उसी प्रकार के कार्य के प्रशिक्षण की जरूरत पड़ती है।" (पार्टेन, 1950)

"किसी विशिष्ट उद्देश्य से सूक्ष्म रूप से देखने, परखने या निरीक्षण करने की प्रक्रिया सर्वेक्षण कहलाती है।" (ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सल कोश, 1955)

"वास्तविक जानकारी प्राप्त करने हेतु आलोचनात्मक निरीक्षण को सर्वेक्षण कहा जाता है।" (वेबस्टर शब्दकोश)

"सर्वेक्षण एक सहकारी प्रयास है जिसमें वैज्ञानिक विधि का प्रयोग किसी विशिष्ट भौगोलिक सीमाओं में आबद्ध तथा कार्यशील तात्कालिक सामाजिक समस्याओं एवं दशाओं के अध्ययन तथा समाधान हेतु किया जाता है।" (फेयरचाइल्ड, 1955, समाजशास्त्र कोश)

"सर्वेक्षण किसी समुदाय की दशाओं एवं आवश्यकताओं का एक वैज्ञानिक अध्ययन है जो सामाजिक प्रगति का रचनात्मक कार्यक्रम बनाने के उद्देश्य से किया जाता है।" (ई. डब्ल्यू. बर्गस)

"एक सामाजिक सर्वेक्षण प्रायः व्यक्तियों के एक समूह की रचना, क्रियाओं तथा रहन-सहन की दशाओं की खोज है।" (सिन पाओ येंग)

"एक सामाजिक सर्वेक्षण किसी सामाजिक दशा, समस्या अथवा जनसंख्या के किसी निश्चित उद्देश्यों हेतु वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित रूप में विश्लेषण की एक विधि है।" (एच. एन. मोर्स, 1924)

अतः उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि सामाजिक सर्वेक्षण का उपयोग सूचना को एकत्रित करने के लिए किया जाता है। इन एकत्रित तथ्यों का प्रयोग किसी समस्या का कारण जानने, उसका निदान ढूंढने, सामाजिक सुधार और पुनर्निर्माण की कोई योजना बनाने आदि उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है। यह एक बड़ी संख्या में व्यक्तियों के विश्वासों, विचारों, धाराओं तथा व्यवहारों का अध्ययन करता है तथा उन्हें प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों तथा पारस्परिक संबंधों का विश्लेषण व विवेचन करने के लिए डाटा को संकलित व एकत्रित करता है।

“सामाजिक सर्वेक्षण के आधार पर “साक्षात्कार अनुसूची (प्रश्नों की एक सूची) का प्रयोग करके आंकड़ों संकलित व एकत्रित किया गया है। आंकड़ों का विश्लेषण हाथ, पेन, पेंसिल, केलकुलेटर, प्रतिशत और तालिकाओं (Tables) का उपयोग करके अध्ययन के निष्कर्षों को स्पष्ट करने के लिए तैयार किए गया है।”

नैतिक प्रतिपूर्ति

इसमें मनुष्य के कर्तव्यों एवं अकर्तव्यों पर विचार किया जाता है, इसे नैतिक विज्ञान भी कहते हैं क्योंकि यह उचित तथा अनुचित में भेद कराता है। नैतिकता का संबंध अनुसंधानकर्ता के नैतिक कर्तव्यों से हैं।

अतः कहा जा सकता है कि इन मुद्दों का संबंध ऐसे प्रश्न से है जो शोध करते समय शोधकर्ता के लिए क्या उचित है और ऐसी कौन सी बातें हैं जिनसे उन्हें बचने की आवश्यकता है? तथ्यों के संग्रह उत्तरदाता के प्रति कुछ नैतिक कर्तव्यों को ध्यान में रखकर किया है जो निम्न है—

1. तथ्यों के संग्रह के दौरान किसी भी उत्तरदाता को जानकारी प्रदान करने के लिए मजबूर नहीं किया गया है। तथ्यों के संग्रह के दौरान उत्तरदाताओं की सुविधाओं को पहली प्राथमिकता दी गयी है।
2. शोधकर्ता को उत्तरदाता को शोध से संपूर्ण जानकारी प्रदान की गयी है।
3. शोधकर्ता को उत्तरदाता द्वारा दी गई सूचना को उसके नाम से सार्वजनिक नहीं किया गया है।
4. किसी प्रकार का मानसिक कष्ट नहीं दिया गया है।

इसप्रकार प्रस्तुत शोध के कार्य को करने के लिए विभिन्न विधियों एवम् कार्यप्रणालियों का उपयोग किया गया है।

निष्कर्ष--प्रस्तुत अध्ययन की रूपरेखा/प्रस्तावना उच्च शिक्षा के विद्यार्थियों के निर्देश के माध्यम पर आधारित है। प्रस्तुत अध्ययन में यह बताया है कि- भाषा और वर्चस्व का गहरा रिश्ता है। अंग्रेजों ने जहां-जहां अपना वर्चस्व कायम किया वहां-वहां अपनी भाषा का वर्चस्व भी स्थापित किया। बहुराष्ट्रीय कंपनियों की भाषा अंग्रेजी थी और यह उनके व्यापार की भाषा थी। मैकाले के आगमन पर उसने एक ऐसा वर्ग तैयार किया जो उनके तथा उनके द्वारा शासित लाखों लोगों के बीच दुभाषिये का काम कर सके। अनेक प्रौद्योगिकी संस्थानों तथा तकनीकों ने भूमंडलीकरण को जन्म दिया। भूमंडलीकरण के विस्तार के साथ ही अंग्रेजी भाषा का तेजी से विस्तार हुआ तथा हिंदी भाषा का हास हुआ। यह भाषा उच्च वर्ग की भाषा थी अर्थात् शासित वर्ग के माध्यम से बोली जाती थी। इस भाषा ने समाज को उच्च तथा निम्न वर्ग में बाँट दिया। भाषा को लेकर कई आन्दोलन हुए जिसके कारण भाषायिक आधार पर देश का विभाजन हुआ। भाषा से सम्बंधित समस्या यही तक सीमित नहीं रही, इसने स्कूलों, कॉलेजों, तथा विश्वविद्यालयी स्तर तक की शिक्षा पर अपना प्रभाव डाला। निर्देश को दो माध्यमों में विभाजित कर दिया- हिंदी माध्यम तथा अंग्रेजी माध्यम। शिक्षा के माध्यमों ने विद्यार्थियों को दो वर्गों में भी विभाजित किया है, पहला- उच्च वर्ग, दूसरा- निम्न वर्ग

उच्च शिक्षा पर इस समस्या का प्रभाव अधिक देखा जाता है। उच्च शिक्षा में निर्देश का माध्यम अंग्रेजी भाषा होती है जिसका हिंदी माध्यम के विद्यार्थी विरोध करते हैं क्योंकि वे हिंदी माध्यम से पढ़े हुए होते हैं। इसप्रकार छात्रों में असंतोष की भावना उत्पन्न होती है। अपरिचित भाषा में निर्देश देने पर उनकी शिक्षा बाधित होती रहती है जिससे उनमें ज्ञान, कौशल और बुद्धि की कमी देखी जाती है। उचित ज्ञान की कमी के कारण वे प्रतिष्ठित पदों की प्राप्ति भी नहीं कर पाते। इसप्रकार धीरे-धीरे शिक्षा का हास होने लगता है। जब किसी वस्तु का स्तर एक बार गिर जाता है तो वह आसानी से अपने पुराने स्तर पर नहीं आ पाती। अर्थात् कहने का आशय यह है कि शिक्षा का स्तर एक बार गिर जाने पर स्तर ऊंचा नहीं उठता क्योंकि उस पर ग्रेशम का नियम लागू हो जाता है और शिक्षा का स्तर निरंतर नीचे गिरता चला जाता है, यही हाल उच्च शिक्षा के स्तर का भी है। प्रस्तुत शोध में निर्देश के माध्यम की समस्या तथा उसके महत्व पर भी प्रकाश डाला गया है और यह बताया गया है कि किसप्रकार विद्यार्थी हिंदी व अंग्रेजी भाषा के बीच में फंसकर रह गये हैं। प्राथमिक स्तर से हिंदी माध्यम में शिक्षा ग्रहण करने वाले विद्यार्थियों को अंग्रेजी भाषा से सम्बंधित समस्याओं का सामना करना पड़ता है। भाषा की समस्या से किस प्रकार निजात पाने के लिए अनेकों सरकारी नीतियों, कार्यक्रमों का क्रियान्वयन करने के बावजूद भी उच्च शिक्षा के स्तर पर भाषा सम्बंधित समस्या बरकरार है।

विभिन्न नीतियों, कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के बावजूद भी भाषा सम्बंधित समस्या उच्च शिक्षा पर क्यों बनी हुई है और विद्यार्थी किस प्रकार इन समस्याओं के रहते उच्च शिक्षा ग्रहण करते हैं? इसी का पता लगाने के लिए यह शोध किया गया है यही इस शोध का महत्व भी है? प्रस्तुत शोध में अध्ययन का उद्देश्य तथा उपकल्पनाओं के बारे में भी बताया गया है तथा इसी अध्याय में अध्ययन की सम्पूर्ण संरचना के बारे में बताया गया है जिसे अध्ययन प्रविधि के रूप में शामिल किया गया है। इन्हीं अध्ययन प्रविधियों की सहायता से शोध कार्य को पूरा किया गया है।

अध्यायीकरण- इस शोध-प्रबंध में कुल 5 अध्याय है जो इस प्रकार है-

1. प्रस्तावना- प्रस्तुत अध्याय में शोध का परिचय, उसकी समस्या, महत्व, उद्देश्य तथा उपकल्पनाओं के साथ-साथ शोध की कार्यप्रणालियों के बारे में चर्चा की गयी है।
2. भारत में शिक्षा नीतियां- प्रस्तुत शोध से सम्बंधित नीतियों तथा साहित्य की समीक्षाओं का उल्लेख किया गया है।
3. सैन्धान्तिक परिपेक्ष्य- प्रस्तुत अध्याय में शोध से सम्बंधित सिद्धान्तों का प्रयोग किया है।
4. निर्देश के माध्यम का विद्यार्थियों पर प्रभाव
5. निष्कर्ष तथा सुझाव

अध्याय.5

निष्कर्ष तथा सुझाव

प्रथम अध्याय में प्रस्तुत शोध परिचय से संबंधित है इस अध्याय में अध्ययन की प्रकृति, अध्ययन की महत्त्व, अध्ययन की समस्या, उद्देश्य एवं उपकल्पनाओं के बारे में विस्तार से चर्चा की गई है। अध्याय में यह जानने का प्रयास किया कि उच्च स्तर पर निर्देश के माध्यम की समस्या का किस प्रकार हिंदी माध्यम के विद्यार्थी सामना करते हुए शिक्षा प्राप्त करते हैं। औपनिवेशिक काल से ही भाषा की समस्या चली आ रही है उसने न केवल देश को, समाज को दो वर्गों तथा शिक्षा को भी माध्यमों में विभाजित कर दिया है, खासकर की उच्च शिक्षा के स्तर को क्योंकि यह शिक्षा का अंतिम स्तर होता है और इस शिक्षा के माध्यम से जीवन की सफलता का रास्ता निकलता है। प्रथम अध्याय में यह निष्कर्ष निकलता है कि उच्च शिक्षा में अंग्रेजी माध्यम से निर्देश ले रहे हिंदी माध्यम के विद्यार्थियों पर तथा उनकी शिक्षा पर सकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ता है। उच्च शिक्षा के स्तर पर उन्हें भाषायिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है जिससे उनकी शिक्षा बाधित होती रहती है। उचित ज्ञान न मिलने के कारण वे समाज के साथ सामंजस्य स्थापित नहीं कर पाते हैं जिससे वह सम्मानित पदों की प्राप्ति नहीं कर पाते और बेरोजगारी की मार झेलते रहते हैं। इसी अध्याय में अध्ययन की संपूर्ण संरचना को शोध प्रवृत्तियों के माध्यम से दर्शाया गया है जिसके माध्यम से शोध-कार्य को सुचारू रूप से पूरा किया गया है।

द्वितीय अध्याय सरकारी नीतियों के बारे में चर्चा की गई है। निष्कर्ष के रूप में कह सकते हैं कि सरकार की नीतियां तथा कार्यक्रम शिक्षा के लिए बहुत आवश्यक है जो कि इस समस्या का समाधान करती रहती हैं। अनेक सरकारी नीतियों तथा आयोगों ने इस समस्या के समाधान के लिए अनेक नीतियों का क्रियान्वयन भाषायिक सर्वेक्षण के आधार पर किया ताकि भविष्य में इस समस्या का सामना ना करना पड़े। आयोगों और नीतियों में कोई ना कोई कमी के कारण इस समस्या का उचित समाधान ना हो सका। इस अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है

कि विभिन्न आयोगों तथा नीतियों ने क्षेत्रीय भाषाओं को ही निर्देश के माध्यम के रूप में स्वीकारा तथा भारतीय भाषाओं के संवर्धन एवम् संरक्षण की बात की। संविधान में हिंदी भाषा को दर्जा दिए जाने पर भी अंग्रेजी का वर्चस्व बढ़ता जा रहा है जिससे हिंदी और अंग्रेजी माध्यम के विद्यार्थियों के मध्य एक खाई बन गई है। भाषा की समस्या के कारण विद्यार्थियों पर तथा उनकी शिक्षा पर क्या प्रभाव पड़ता है किस तरह से वे इस समस्या को झेलते हैं? नीति निर्देशक किस प्रकार से भाषा की समस्या का समाधान कर सकते हैं। इन सभी बातों का ध्यान रखते हुए 29 जुलाई, 2020 को राष्ट्रीय शिक्षा नीति का क्रियान्वयन किया गया तथा इसमें कहा गया कि उच्च स्तर पर क्षेत्रीय भाषा में निर्देश देने की बात की इसके साथ ही यह भी कहा कि बिना किसी दबाव के विद्यार्थी अपनी इच्छानुसार भाषा का चयन कर सकते हैं। यह भी सुझाव दिया कि क्षेत्रीय भाषाओं को शिक्षा के माध्यम पर प्रतिष्ठित करने से शिक्षा में माध्यम जैसी समस्या को समाप्त किया जा सकता है क्योंकि व्यक्ति इसी के माध्यम से अपने विचारों को दूसरों के सामने प्रकट करता है इसलिए सभी स्तर पर इस निर्देश के माध्यम के रूप में अपनाया जाना अपनाया जाए। भारतीय भाषाओं के संवर्धन एवम् संरक्षण के लिए निम्न सुझाव दिए।

इसी अध्याय में प्रस्तुत शोध से संबंधित विभिन्न शोधकर्ताओं तथा लेखकों के द्वारा लिखित साहित्यों की साहित्य की गई है। जिसमें मातृभाषा, क्षेत्रीय भाषा तथा प्रांतीय भाषा के माध्यम से शिक्षा देने की बात पर बल दिया है। कई लेखक इस बात पर भी बल देते हैं कि हिंदी विद्यार्थियों को अंग्रेजी ही क्यों सीखनी चाहिए अंग्रेजी भाषा को हिंदी क्यों नहीं? प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन से यह कहना उचित होगा कि विद्यार्थियों को अपरिचित भाषा में शिक्षा देना न्यायोचित है या नहीं? अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि विद्यार्थियों को उसी भाषा में शिक्षा दी जानी चाहिए जिस भाषा के वो अभ्यस्त होते हैं।

तृतीय अध्याय में शोध से समन्वित समाजशास्त्रीय सिद्धांतों के बारे में जानकारी दी गई है। इस अध्ययन में उपयुक्त सिद्धांतों में संघर्षवादी परिपेक्ष्य को अपनाया गया है। जिसमें बोरदुउ तथा आल्थूसर के सिद्धांतों को उपयोग में लाया गया है। दोनों के सिद्धांतों को शिक्षा/भाषा के सन्दर्भ में समझने का प्रयास करेंगे। प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि उच्च वर्ग सांस्कृतिक पूंजी (शिक्षा) का उपयोग करके अच्छी शिक्षा, पद व शक्ति को प्राप्त कर अपनी प्रस्थिति को समाज में कायम रखते हैं क्योंकि यह उन्हीं के अनुरूप कार्य करती है और निम्न वर्ग का शोषण करते रहते हैं। बोरदुउ सांस्कृतिक पूंजी (शिक्षा) को गरीबी दूर करने का साधन नहीं बल्कि समाज में असमानता फैलाने का साधन मानते हैं। इसी सांस्कृतिक पूंजी के माध्यम से सांस्कृतिक पुनुरुत्थान पर बल देते हैं। उनका मानना है कि हैबिट्स के

माध्यम से बताते हैं कि विद्यार्थी इस बात का अभ्यस्त हो जाता है कि किन साधनों का प्रयोग करके उसे शिक्षा प्राप्त करनी है। आल्थुजर सिद्धांत में सांस्कृतिक पुनरुत्पादन की बात करते हैं और कहते हैं कि उत्पादन के साधन पुराने हो जाने पर नए साधनों का निर्माण होता रहता है यह प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित होती रहती है।

आल्थुजर अपने पूंजीवाद की वास्तविक संरचना के अध्ययन में बताते हैं कि जब इसमें परिवर्तन आता है तो ही समाज में परिवर्तन आता है। आल्थुजर मानते हैं कि समाज का विकास तथा उद्विकास एक समान ना होकर असमान रूप से होता है इसके लिए वे स्कूल को जिम्मेदार मानते हैं। किस प्रकार संरचना के रखरखाव में उत्पादन के साधनों का योगदान होता है? वह कहते हैं कि उत्पादन के साधन बनते बिगड़ते रहते हैं अर्थात् उत्पादन के साधन पुराने होकर नष्ट हो जाते हो जाते हैं, यह प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है तथा पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होती रहती है। संरचना के रखरखाव के संदर्भ में संस्कृति (भाषा) को देखते हैं। आल्थुजर अपने राज्य उपकरण में बताते हैं कि किस प्रकार पूंजीपति वर्ग अपनी संस्कृति का उपयोग करके अधिक से अधिक धन, शिक्षा एवम् शक्ति को बढ़ाते रहते हैं। संरचना के रखरखाव में वे स्कूल को उपकरण के रूप में उपयोग करते हैं और निम्न वर्गों को बिना पता चले उनका शोषण करते रहते हैं और निम्न वर्गों को लगता है उन्होंने अच्छे से पढ़ाई नहीं की इसलिए वे उच्च संस्कृति (शिक्षा, धन, शक्ति) नहीं प्राप्त कर सके, इसे ही आल्थुजर झूठी चेतना कहते हैं। हमें विश्वास दिलाया जाता है कि हमारा शोषण नहीं किया जा रहा है लेकिन नव-मार्क्सवादी नारीवाद का मानना है कि विषयों का अलग चुनाव करके अर्थात् महिलाओं के लिए अलग विषय तथा पुरुषों के लिए अलग विषयों का चुनाव करके उन्हें एक प्रकार से शोषित ही किया जाता है। स्कूल को गैर बराबरी का साधन मानते हैं। इसप्रकार आल्थुजर के सिद्धान्तों को शोध में शामिल किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में शोध से सम्बंधित आकड़ों का विश्लेषण किया गया है तथा उच्च शिक्षा में निर्देश के माध्यम से विद्यार्थियों पर तथा उनकी शिक्षा पर पड़ने वाले प्रभावों को आकड़ों के माध्यम से विश्लेषित कर निर्देश प्राप्त किये गये हैं जो इस प्रकार है...

1. विद्यार्थियों की पूर्व शिक्षा जिस माध्यम में होती है उसी माध्यम में भी सहजता व सरलता महसूस करते हैं। हिंदी माध्यम के विद्यार्थी उच्च शिक्षा में निर्देश की भाषा के रूप में हिंदी को स्वीकारते हैं क्योंकि वह प्रायः सरकारी स्कूलों के पढ़े हुए होते हैं जिनके निर्देश का माध्यम

हिंदी भाषा होती है तथा अंग्रेजी माध्यम के विद्यार्थी उच्च शिक्षा में निर्देश की भाषा के रूप में अंग्रेजी को अपनाते हैं क्योंकि वह कॉन्वेंट्स स्कूलों में पढ़े हुए होते हैं जिनके निर्देश का माध्यम अंग्रेजी भाषा होता है। दोनों ही माध्यम के विद्यार्थी अपनी ही भाषा के माध्यम से शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं।

2. प्राप्त आंकड़ों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि उच्च शिक्षा में निर्देश का माध्यम वही होना चाहिए जो अधिकांश जनता द्वारा बोली जाती है। अतः अधिकांश विद्यार्थियों ने हिंदी माध्यम को निर्देश के माध्यम के रूप में स्वीकार किया क्योंकि हिंदी भाषा उनकी राजभाषा है और अधिकांश जनता इस भाषा की जानकार है और वह दैनिक कार्यों में इसी भाषा का उपयोग करते हैं प्रयोग करते हैं।

3. दोनों ही माध्यम के विद्यार्थी शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर अपनी भाषाओं के माध्यम से अध्ययन करने पर सफलतापूर्वक सीख व समझ सकते हैं तथा उचित ज्ञान की प्राप्ति कर सकते हैं। राजभाषा हिंदी होने के कारण अधिकांश विद्यार्थियों की प्रारंभिक शिक्षा हिंदी भाषा के माध्यम से ही आरंभ होती है जिसके कारण अंग्रेजी भाषा के समर्थकों की संख्या हिंदी भाषा के समर्थकों की अपेक्षा बहुत कम है। अंग्रेजी माध्यम के विद्यार्थी हिंदी भाषा का विरोध तो नहीं करते लेकिन उनका मानना है कि अंग्रेजी भाषा के बगैर धार्मिक राजनैतिक, गतिविधियां संपन्न नहीं की जा सकती क्योंकि आज भूमंडलीकरण के दौर में अंतरराष्ट्रीय देशों के बीच अपनी संस्कृति तथा धर्मों का प्रचार-प्रसार अंग्रेजी भाषा के में ही किया जा सकता है क्योंकि उनकी भाषा अंग्रेजी है ना कि हिंदी। आज राजनीतिक क्षेत्र में भी अंग्रेजी की महत्वता देखी जा सकती है। देश की आर्थिक स्थिति को मजबूत करने तथा विदेशों से व्यापार करने के लिए अंग्रेजी भाषा का ज्ञान होना आवश्यक है। ज्यादातर विद्यार्थी अपने देश में ना रह कर विदेशों में जाकर नौकरी के सपने देखते हैं इससे वह अंग्रेजी का समर्थन तथा उसके अनिवार्यता को स्वीकार करते हैं।

4. दोनों ही माध्यमों के विद्यार्थियों को अपरिचित भाषा के माध्यम से शिक्षा दिए जाने पर नकारात्मक प्रभाव देखे जाते हैं। अपरिचित भाषा के माध्यम से निर्देश दिए जाने पर ना तो विद्यार्थी अंग्रेजी सीख सकते हैं और ना ही हिंदी। विद्यार्थी निर्देश के माध्यम की भाषा में उलझ कर रह जाते हैं और उचित ज्ञान की प्राप्ति भी नहीं कर पाते हैं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि उच्च शिक्षा में निर्देश के माध्यमों का विद्यार्थियों पर नकारात्मक दृष्टिकोण देखा जाता है।

5. प्राप्त आंकड़ों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि अंग्रेजी भाषा का ज्ञान न होने के कारण तथा उच्च शिक्षा में अंग्रेजी भाषा के माध्यम से पढ़ाए जाने पर हिंदी माध्यम के विद्यार्थियों की शिक्षा बाधित होती रहती है ऐसा इसलिए क्योंकि वह पाठ्य-सामग्री को नहीं समझ पाते हैं और पाठ्य-सामग्री को समझने के लिए ज्यादातर विद्यार्थी अनुवाद विधि तथा पुस्तकों का सहारा लेते हैं। अंग्रेजी एक अनुवाद विधि है। प्रायः विद्यार्थियों द्वारा हिंदी पुस्तकों के ना मिलने पर तथा अंग्रेजी पुस्तकों की बहुलता के कारण अंग्रेजी पुस्तकों का हिंदी में अनुवाद किया जाता है। इसलिए अंग्रेजी भाषा अनुवाद विधि कहते हैं। कुछ विद्यार्थी न तो हिंदी समझ पाते हैं और न ही अंग्रेजी ऐसे विद्यार्थी शिक्षा को बीच में ही छोड़ कर चले जाते हैं। इस प्रकार उच्च शिक्षा में निर्देश के माध्यमों के माध्यम से इनकी शिक्षा बाधित रही है। कॉन्वेंट्स स्कूल के विद्यार्थी अंग्रेजी माध्यम से ही शिक्षा ग्रहण करते हैं इसलिए उन्हें हिंदी भाषा में शिक्षा ग्रहण करने पर असुविधा होती है। अंग्रेजी माध्यम के ज्यादातर विद्यार्थी पुस्तकों का उपयोग करते हैं। इस प्रकार यह कह सकते हैं कि निर्देश के माध्यमों (हिंदी/अंग्रेजी माध्यम) के माध्यम से शिक्षा ग्रहण करने से वे पाठ्य-सामग्री नहीं समझ पाते जिसके कारण उनकी शिक्षा बाधित होती रहती है।

6. उच्च शिक्षा में अंग्रेजी माध्यम से निर्देश दिए जाने पर हिंदी माध्यम के विद्यार्थियों के ग्रेड्स कम आते हैं। विषय को ना समझ पाने के कारण ज्यादातर विद्यार्थी रटने की क्रिया या नकल का सहारा लेते हैं। पाठ्य-सामग्री को रटने से समझ तो लेते हैं परंतु उसकी अभिव्यक्ति नहीं कर पाते हैं जिसके कारण उनके ग्रेड्स कम आते हैं। इस प्रकार विद्यार्थी परीक्षा में तो उत्तीर्ण हो जाते हैं परंतु उनकी सृजनात्मक शक्ति, मौलिकता की क्षति होती रहती है।

7. प्राप्त आंकड़ों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि हिंदी माध्यम के विद्यार्थी उच्च शिक्षा में अंग्रेजी के माध्यम से निर्देश देने पर मुख बधिर होकर चुपचाप सुनते रहते हैं तथा अध्यापकों द्वारा प्रश्न पूछे जाने पर उसका उत्तर न बताने के संदर्भ में वह स्वयं को हीनभावना की दृष्टि से देखते हैं। ज्यादातर विद्यार्थी इसके लिए स्वयं को जिम्मेदार न मानकर शिक्षा की नीतियों को जिम्मेदार मानते हैं क्योंकि प्राथमिक स्तर पर तो क्षेत्रीय भाषाओं के माध्यम से निर्देश देने की बात की गई है परंतु उच्च स्तर पर अंग्रेजी भाषा में निर्देश दिए जाते हैं। निर्देश का माध्यम बदलने के कारण वे उचित ज्ञान की प्राप्ति तो नहीं कर पाते हैं परंतु स्वयं को बेहतर बनाने की कोशिश करते रहते हैं ताकि अपने लक्ष्यों की प्राप्ति कर सकें।

8. दोनों ही माध्यमों के विद्यार्थी उच्च शिक्षा में अपनी भाषा के माध्यम से शिक्षा दिए जाने पर सहज महसूस करते हैं क्योंकि वह पाठ्य-सामग्री को समझ पाते हैं तथा शिक्षकों के प्रश्नों के जवाब दे सकते हैं तथा अपनी बातों, विचारों का आदान-प्रदान आसानी कर सकते हैं। अतः कह सकते हैं कि विद्यार्थी जिस भाषा के अभ्यस्त होते हैं उसी भाषा में सहज महसूस करते हैं। दोनों ही माध्यमों के विद्यार्थियों ने यह स्वीकार किया कि विपरीत भाषाओं के माध्यम से शिक्षा देने पर विद्यार्थियों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है क्योंकि वे न तो पाठ्य-सामग्री को समझ पाते हैं और न ही उचित ज्ञान की प्राप्ति कर सकते हैं।

9. प्राप्त आंकड़ों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि निर्देश के माध्यमों के कारण उच्च शिक्षा को प्रतियोगी परीक्षाओं की प्रवेश परीक्षा से वंचित हुए हैं क्योंकि कुछ प्रवेश परीक्षाओं में अंग्रेजी भाषा को ही अनिवार्यता दी गई है तथा कुछ प्रवेश परीक्षाओं में हिंदी भाषा को किसी भाग में शामिल किया गया है। इसके आधार पर यह कह सकते हैं कि उच्च शिक्षा की प्राप्ति तथा नौकरियों के लिए दोनों भाषाओं का ज्ञान आवश्यक है।

10. वर्तमान समय में दो संघीय भाषाएं (हिंदी और अंग्रेजी) होने के कारण अधिकांश विद्यार्थी हिंदी भाषा को उच्च शिक्षा में निर्देश के रूप में प्रतिष्ठित करने की बात करते हैं। उनका कहना है कि जिस भाषा में विद्यार्थी ज्यादा सीखते, अपने कौशल का विकास करते हैं शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर निर्देश का माध्यम उसी भाषा में होना चाहिए। राष्ट्रभाषा होने के कारण अधिकांश विद्यार्थी उच्च शिक्षा में हिंदी भाषा को ही निर्देश की रूप में लागू करना चाहते हैं। यदि राजभाषा का शैक्षिक व वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अध्ययन करें तो भाषा समस्या का विवाद समाप्त हो जाएगा क्योंकि वैधानिक एवं व्यवहारिक रूप से हिंदी को राष्ट्रभाषा का दर्जा प्राप्त है इसलिए उच्च शिक्षा तथा शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर निर्देश का माध्यम हिंदी भाषा होना चाहिए। यदि राष्ट्रभाषा के विवाद को समाप्त दिया जाए तो भाषा से संबंधित विवाद भी समाप्त हो जायेगा।

उच्च शिक्षा में निर्देश के माध्यमों से विद्यार्थियों को होने वाली समस्याओं से अध्यापक/अध्यापिका भाषा से संबंधित समस्याओं का निदान कैसे करते हैं, यह जानने का प्रयास किया गया है?

1. जैसा कि कहा गया है कि उच्च शिक्षा में निर्देश का माध्यम अंग्रेजी भाषा होती है लेकिन ज्यादातर विभागों में विद्यार्थियों को मिश्रित भाषा के माध्यम से निर्देश दिए जाते हैं ताकि

विद्यार्थी उचित ज्ञान की प्राप्ति कर सकें। कुछ विषयों की वर्तनी, उच्चारण अत्यंत कठिन होने के कारण उन्हें हिंदी भाषा में नहीं पढ़ा जा जैसे-मेडिकल इंजीनियरिंग गणित और साइंस।

2. आंकड़ों के सन्दर्भ से यह निष्कर्ष निकलता है कि पाठ्य-सामग्री को पढ़ते-पढ़ते विद्यार्थी शब्दों को जानने लगते हैं इसलिए प्रश्नों की भाषा का माध्यम अंग्रेजी भाषा ही रखा जाता है। जिन विद्यार्थियों को प्रश्नों की भाषा का माध्यम नहीं समझ आता है उन्हें विद्यार्थियों द्वारा पूछे जाने पर अध्यापकों द्वारा समझा दिया जाता है ताकि हिंदी माध्यम के विद्यार्थी भी प्रश्नों के उचित जवाब लिख सकते हैं और अच्छे ग्रेडस पा सकें।

3. राष्ट्रभाषा को संरक्षित व संगठित करने के लिए विश्वविद्यालय स्तर पर 14 सितंबर को हिंदी दिवस अन्य जाता है। कई विभागों में सांस्कृतिक कार्यक्रम, निबंध प्रतियोगिता, सेमिनार, क्विज आदि का आयोजन किया जाता है तथा मार्च के महीने में हिंदी पखवाड़े का आयोजन जिसमें पत्र संवाद, नोटिंग, फाइल्स, पत्रावली आदि हिंदी के माध्यम से ही संचालित किये जाते हैं। इस प्रकार कह सकते हैं कि हिंदी भाषा के संरक्षण एवम् संवर्धन के लिए कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है।

सुझाव

शिक्षा हेतु लक्ष्य का निर्धारण आवश्यक होता है। विश्वविद्यालय के लक्ष्यविहीन शिक्षा राष्ट्र, विद्यार्थी तथा समाज पर गलत प्रभाव डालती है। इसलिए शीघ्रातिशीघ्र उपयुक्त उद्देश्य निर्धारित करना आवश्यक हो गया है, यदि ऐसा नहीं किया गया तो राष्ट्र की संपन्नता और समाज के कल्याण (जो विद्यार्थियों द्वारा ही संभव है) कि बड़ी-बड़ी बातें सिर्फ किताबों में ही बंद होकर रह जाएंगी। विश्वविद्यालय अपनी प्राचीन पद्धति से आबध्य नहीं रह सकते। समाज के बढ़ती हुई जटिलता और उसकी बदलती हुई संरचना के कारण विश्वविद्यालय को अपने उद्देश्य में परिवर्तन करना आवश्यक है।

इस अध्याय में अध्ययन के उपरांत निकाले गए निष्कर्षों तथा अध्ययन से संबंधित सुझावों का विवरण इस प्रकार है---

1. हिंदी किसी भी देश की भाषा नहीं है अपितु पूरे भारत की भाषा है। उसे अखिल भारतीय रूप देने के लिए उसकी शब्दावली को मजबूत बनाना होगा। विद्यार्थियों को हमारे प्राचीन मूल्यों, संस्कृतियों से परिचित कराना चाहिए। जिनसे संस्कृतियों का समावेश हो ऐसे कार्यक्रमों को समय-समय पर आयोजित किये जाने चाहिए। भाषा संबंधी समस्या को दूर करने के लिए निर्देशन कार्यक्रम को चलाने चाहिए ताकि अध्यापक तथा अध्यापिकाओं के मध्य मधुर संबंध स्थापित हो सके और विद्यार्थी अपनी भाषा-संबंधी समस्याओं को एक-दूसरे के समक्ष बिना संकोच के रख सकें ताकि विद्यार्थी अपनी भाषा के माध्यम से अपनी समस्याओं का उचित निवारण पा सकें। शिक्षक की प्रक्रिया को प्राकृतिक व अर्थपूर्ण बनाने के लिए मातृभाषा को शिक्षा का सशक्त माध्यम बनाया जाना चाहिए।
2. पाठ्यक्रम में क्षेत्रीय भाषा, संपर्क भाषा तथा अंग्रेजी भाषा का इस प्रकार समावेश हो कि किसी प्रकार का क्षेत्रीय विवाद ना खड़ा हो। आर्थिक एवं प्रशासनिक कठिनाइयों के कारण प्रांत पुनर्गठन कमीशन ने भाषा के आधार पर अलग-अलग राज्यों के निर्माण को स्वीकार किया है, जिसके कारण भाषावाद की समस्या और गंभीर होती चली गई। निर्देश का माध्यम ऐसी भाषा होना चाहिए जो संपूर्ण भारतवासियों के लिए सुगम, सरल व सहज हो फिर चाहे वह मातृभाषा हो, राजभाषा हो, प्रादेशिक भाषा हो या स्थानीय भाषा। भाषा ऐसी होनी चाहिए ताकि भारत का विभाजन ना हो भाषाई आधार पर तो बिल्कुल नहीं। इसप्रकार क्षेत्रीय भाषाओं को शिक्षा के माध्यम के पद पर प्रतिष्ठित करने से शिक्षा के

माध्यम संबंधित समस्या को दूर किया जा सकता है क्योंकि व्यक्ति अपनी मातृभाषा, राष्ट्रभाषा, राजभाषा में दूसरों के विचारों को समझ सकता है और अपने विचारों को भलीभांति रख सकता है। अतः शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर निर्देश का माध्यम व्यक्ति की राष्ट्रभाषा, क्षेत्रीय भाषा, मातृभाषा, राजभाषा या क्षेत्रीय भाषाओं होनी चाहिए।

3. प्रवेश परीक्षा को निष्पक्ष तरीके से कराना चाहिए ताकि हिंदी, अंग्रेजी माध्यम के विद्यार्थियों को समान अवसर प्राप्त हो। दुर्भाग्यवश अंग्रेजी आज भी परीक्षा का माध्यम बनी हुई है अधिकतर प्रतियोगी परीक्षाएं इसी माध्यम द्वारा संचालित की जाती हैं नागरिकों में यह मानसिकता उत्पन्न हो गई है कि हिंदी क्यों सीखे? अतः परीक्षा में हिंदी विषय को शामिल किया जाए इसके अतिरिक्त परीक्षा में अंग्रेजी माध्यम के साथ-साथ हिंदी माध्यम में भी प्रश्नों को शामिल किया जाए। सरकारी, निजी विद्यालय, महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालय में भाषा की विभेदकारी व्यवस्था को समाप्त करने पर विचार विमर्श किया जाना चाहिए तथा विश्वविद्यालयी शिक्षा में एकरूपता लाई जानी चाहिए। इससे दोनों माध्यमों के विद्यार्थियों पर शिक्षा का सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा दोनों ही माध्यम के विद्यार्थी उचित ज्ञान की प्राप्ति कर जीवन में सफल होंगे भाषा के आधार पर किसी प्रकार का भेदभाव न किया जाए अर्थात् संघ लोक सेवा आयोग, राज्य लोक सेवा आयोग, केंद्रीय भर्तियों, राज्य भर्तियों, भारतीय सेना न्यायालय आदि में होने वाली नियुक्तियों में अंग्रेजी ज्ञान की अनिवार्यता को खत्म किया जाना चाहिए तथा नियुक्तियों को क्षेत्रगत विषयगत और आवश्यक ज्ञान को ही परख कर नियुक्ति की जानी चाहिए चाहे वह ज्ञान जिस भी भाषा में हो क्योंकि भाषा ही साध्य एवं साधन है। अर्थात् भाषा ही सीखने और सिखाने की वस्तु है।
4. अन्य भाषाओं के साहित्य से हिंदी को अनुवादित शब्द प्रायः अस्वाभाविक होते हैं। अतः हिंदी में अनुवाद का कार्य उन्हें सौंपा जाए जिन्हें उस भाषा का ज्ञान हो जिस भाषा से हिंदी में अनुवाद किया जा रहा है। समय-समय पर देवनागरी लिपि में पर्याप्त संशोधन किया जाना चाहिए हिंदी को पूर्णतया सुगठित व सुव्यवस्थित बनाने के लिए।